ज्ञानामृत

मई, 1989 वर्ष 24 ❋ अंक 11 मूल्य 1.75

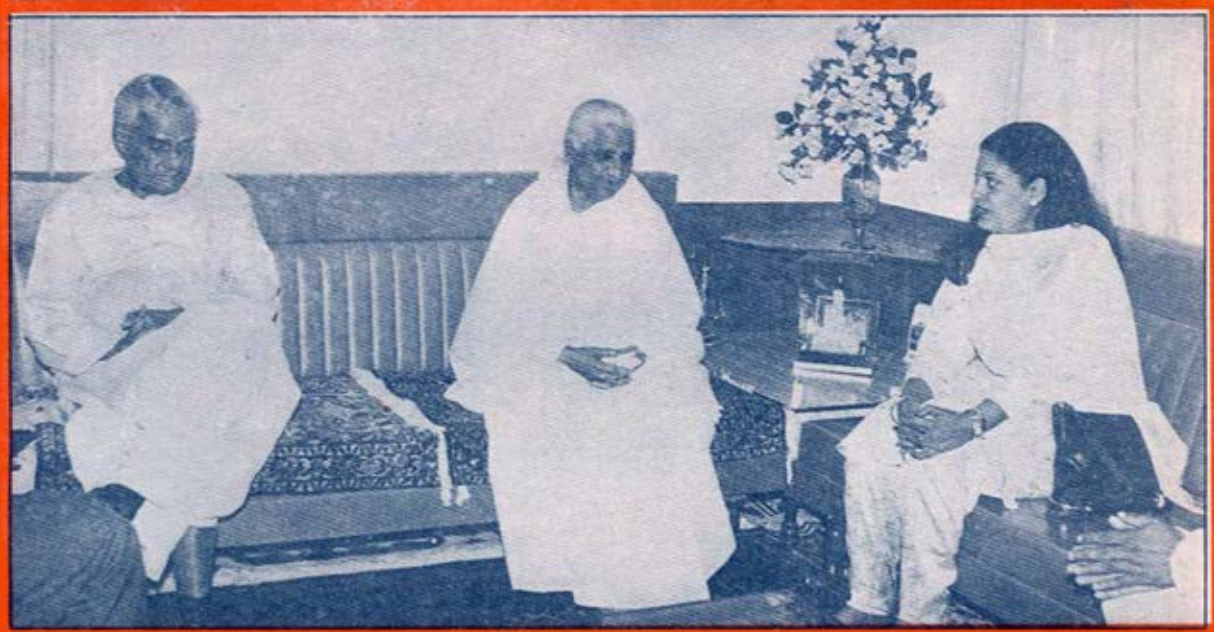

■ नई-दिल्ली में भारत के प्रधान मन्त्री भ्राता राजीव गांधी को माऊंट आबू में 'युवा-यात्रा' के उद्घाटन के लिये निमन्त्रण देने के पश्चात् ब्र. कु. दादी चन्द्रमणि जी, देहली की उपमहापौर बहन अन्जना कंवर जी, देहली नगर निगम के कुछ सदस्य तथा ब्र. कु. भाई बहिनें, प्रधान मन्त्री जी के साथ ग्रुप फोटो में

■ माऊंट आबू-पीरू में भारत की एम्बैसेडर बहन प्रेम कुमारी तथा भारतीय जनता पार्टी के नेता भ्राता अटल बिहारी बाजपेयी जी ब्र. कु. दादी प्रकाशमणि जी के साथ।

कोल्हापुर : एक सार्वजनिक कार्यक्रम में महाराष्ट्र पद्धति से अतिथिगण व ब्र० कु० जगदीशचन्द्र जी का स्वागत किया गया।

जामनगर : नवनिर्मित 'जीवनमुक्ति दर्शन आध्यात्मिक संग्रहालय' का उद्घाटन करती हुई दादी प्रकाशमणि जी

सावदा : महाराष्ट्र राज्य कांग्रेस (ई) की अध्यक्षा प्रतिभाताई पाटिल का स्वागत करती हुई ब्र० कु० शकुन्तला बहन।

फतेहाबाद : मेले का उद्घाटन करने के लिए भ्राता ओ. पी. इन्दौरा, एस. डी. एम. पधारे थे। वे ब्र० कु० भाई-बहिनों के साथ शिव परमात्मा की याद में खड़े हैं।

अहमदनगर (आन्ध्र प्र.) ब्र० कु० जगदीशचन्द्र जी के स्थानीय राजयोग केन्द्र पर पधारने पर वहां के मुनसिफ मैजिस्ट्रेट पुष्पगुच्छ द्वारा स्वागत करते हुए।

वीटा : ब्र० कु० जगदीशचन्द्र जी के आगमन पर स्वागत समारोह में दीप प्रज्ज्वलित करते हुए वीटा बैंक के अध्यक्ष तथा नगराध्यक्ष।

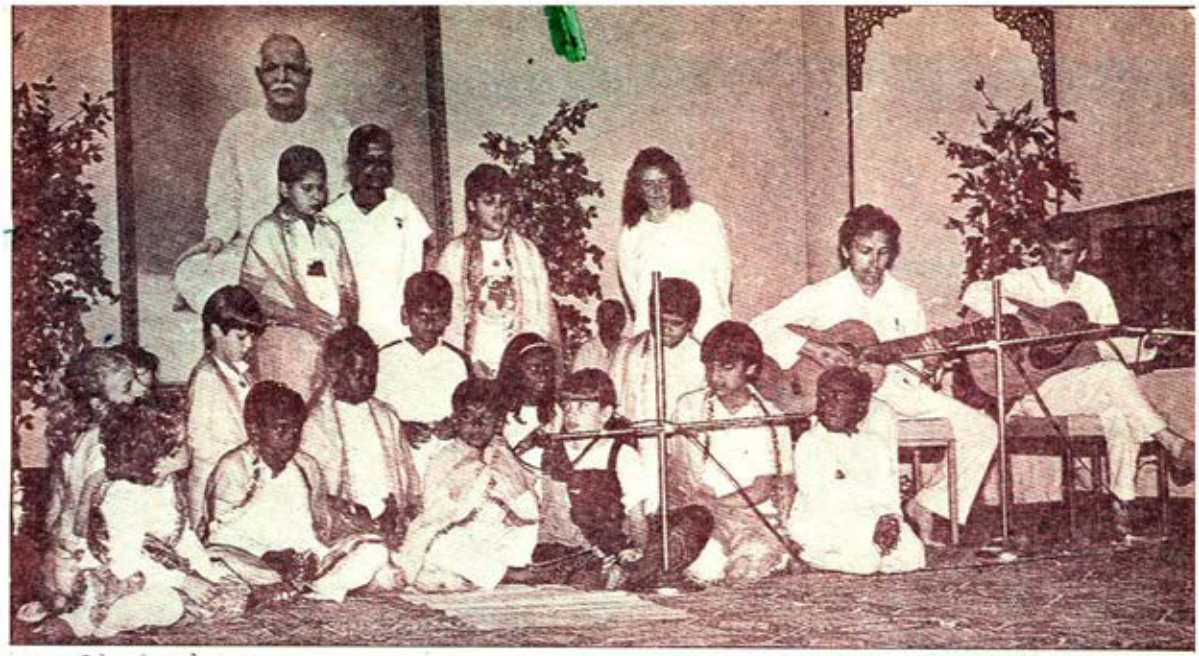

माउन्ट आबू–विदेश से पधारे बच्चे अपना सास्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हुए.

माउँट आबू– ब्र. कु. रत्न मोहिनी तथा ब्र. कु. शान्तामणि जी जोधपुर के सु० इन्जीनियर (पी. डब्लयु. डी.) से ज्ञान वार्तालाप करते हुए।

फतेहाबाद में चरित्र-निर्माण आध्यात्मिक मेला में राजयोग शिविर का उद्घाटन करते हुए भ्राता बलबीर सिंह जी, विधान सभा सदस्य।

ब्र. कु. भावना न्यूज़ीलैन्ड के उच्चायुक्त को ईश्वरीय सन्देश देने के पश्चात् चित्र में उनके साथ दिखाई दे रही हैं।

Regd No. 10563/65-D, (E) -70

थाना - 'सुखमय संसार' आध्यात्मिक मेले का उद्घाटन दृश्य। दादी प्रकाशमणि जी, उपमहापौर जी तथा अन्य दीप प्रज्जवलित करते हुए।

रायचूर (कर्नाटक) में आयोजित की गई 'गीता और गीताज्ञानदाता' गोष्ठी में भाग लेते अतिथिगण।

मालवीय नगर (नई दिल्ली) सेवा केन्द्र पर उपराज्यपाल भ्राता रमेश भण्डारी जी सेवाकेन्द्र पर पधारने पर ब्र. कु. आशा उन्हें ईश्वरीय साहित्य भेंट कर रही हैं।

अहमदाबाद (गिरधरनगर) : सेवाकेन्द्र की ओर से कैन्सर चिकित्सालय के डाक्टरों का एक सम्मेलन रखा गया। चित्र में प्रमुख डाक्टर लोग दिखाई दे रहे हैं।

अमृत-सूची

१.	रेखा मर्यादा की (सम्पादकीय)	२
२.	क्या परमात्मा है? वह क्या करता है और क्या नहीं करता?	५
३.	सम्पूर्ण स्वास्थ्य	९
४.	एक अनूठा अनुभव	१२
५.	महसूसता से होगा परिवर्तन	१३
६.	अलबेलापन भाग्य-विधाता से भाग्य लेने से वंचित कर देता है	१६
७.	इन्सान बनो, ईश की सन्तान बनो	१७
८.	'जीवन को मानवीय बनाने का केन्द्र' दिव्य जीवन कन्या छात्रवास, इन्दौर	१८
९.	शुद्ध विचारों से होगा कलियुगी बेड़ा पार	२०
१०.	सतयुग में हम श्री लक्ष्मी या श्री नारायण जैसा सुन्दर रूप कैसे प्राप्त करेंगे ?	२१
११.	बादलों के पार	२३
१२.	धर्म का सच्चा स्वरूप	२४
१३.	पवित्रता का पुरुषार्थ	२५
१४.	आत्मा, परमात्मा और योग	२६
१५.	मूरत मुस्काई : एक अनोखी अनुभूति	२७
१६.	स्व-उन्नति तथा सर्व की उन्नति के लिये कुछ धारणा बिन्दु	२९

'ज्ञानामृत' सम्बन्धी विशेष सूचनाएं

प्रिय पाठकगण,

ईश्वरीय मधुर स्मृति स्वीकारम,

आपको जानकर प्रसन्नता होगी कि ज्ञानामृत पत्रिका दिन प्रतिदिन हर रूप से उन्नति की ओर अग्रसर है। आपके सहयोग से इसके सदस्यों की संख्या काफी वृद्धि को पाई है और आशा है कि इस पत्रिका से अधिक से अधिक आत्मओं को ज्ञान लाभ होगा। मई मास का अंक जो आप पढ़ रहे हैं २४वें वर्ष का ११ वां अंक है। जुलाई मास में ज्ञानामृत अपने २५ वें वर्ष आर्थात् रजत जयन्ति वर्ष में पदार्पण करेगा। ज्ञानामृत की रजत जयन्ति के उपलक्ष्य में एक सुन्दर कैलेन्डर निकाला जा रहा है। इस कैलेन्डर में विशेष 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के अन्तर्गत होने वाले कार्यक्रम तिथि अनुसार छापे जावेंगे। इस में वे कार्यक्रम सम्मिलित होंगे जो अन्तर्राष्ट्रीय,राष्ट्रीय या जोनल स्तर के होंगें। ये कैलेन्डरज़ ज्ञानामृत के नए वर्ष के सदस्यों को बिना मूल्य दिये जायेंगे।१५ जून १९८९ तक जो 'ज्ञानामृत' के सदस्य बन जावेंगे उनको यह कैलेन्डर भेजे जावेंगे।

अतः आप से अनुरोध है कि जुलाई मास से आरम्भ होने वाले ज्ञानामृत के नए वर्ष अर्थात् रजत जयन्ति वर्ष के सदस्यों की सूचना एवं शुल्क १५ जून १९८९ तक निम्न पते पर आवश्य भेजें।

ज्ञानामृत का वार्षिक शुल्क-२४रूपये

अर्द्ध वार्षिक शुल्क-१२रूपये

शुल्क केवल 'ज्ञानामृत' (Gyan Amrit) के नाम पर ही भेजें।

नोटः पेपर की कीमतों में अति वृद्धि होने के कारण शुल्क में वृद्धि की गई है।

ईश्वरीय सेवा में व्यवस्थापक 'ज्ञानामृत'
बी-9/19 कृष्णा नगर देहली-110051.

रायचूर (कर्नाटक) : ब्र० कु० जगदीशचन्द्र जी, मुख्य-प्रवक्ता, ब्रह्माकुमारी ई. वि. वि. न्यायाविद सम्मेलन में अपने विचार प्रगट करते हुए।

सम्पादकीय

रेखा मर्यादा की

मनुष्य के पारिवारिक और सामाजिक जीवन में मर्यादा का अपना एक महत्त्व होता है। मर्यादा केवल संसद (Parliament) में शिष्टता और सम्मान एवं संविधान के अनुकूल व्यवहार को ही नहीं कहते बल्कि घर-परिवार में, व्यापार-कारोबार में, मित्र-मंडली में, अड़ोसी-पड़ोसी में, सगे और सम्बन्धियों में, देश और प्रदेशों में गोया हरेक कार्य-क्षेत्र एवं सम्बन्ध-क्षेत्र में मर्यादा पालनीय होती है। **यद्यपि मर्यादा कोई 'कानून' (Law) नहीं और पाप-पुण्य की परिभाषा पर आधारित कोई 'आचार-संहिता' भी नहीं परन्तु पारस्परिक सम्बन्धों में कलह-क्लेश की स्थिति को पैदा होने से रोकने के लिए तथा कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए तथा समाज में तालमेल, सामञ्जस्य, स्नेह और व्यवस्था बनाये रखने के लिए अत्यावश्यक है।** सच तो यह है कि अगर मर्यादा बनी रहे तो कानून और दण्ड-संहिता की आवश्यकता ही नहीं होगी और तनाव से बचने के लिए डाक्टर व गोलियों की जरूरत भी नहीं रहेगी, न ही आपस में मन-मुटाव, टकराव या भाव-स्वभाव के कारण अलगाव ही पैदा होगा। मर्यादा एक ऐसा कायदा है जिसमें ही फायदा होता है। यह एक दूसरे से सज्जनता और सम्मान से व्यवहार करने का अलिखित समझौता (Unwritten agreement) है।

मर्यादा के बिना समाज तुच्छ

जैसे किसी मशीन के कल-पुर्जों को सुचारू रूप से चलाने के लिए साफ रखने तथा उन्हें ग्रीज (Grease) या तेल देने की जरूरत होती है, मानव-समाज में व्यक्तियों के बीच सम्बन्धों को स्निग्ध बनाये रखने के लिए मर्यादा वैसा ही कार्य करती है। सत्यता तो यह है कि मर्यादा के बिना परिवार और समाज में ऐसी किरकराहट पैदा हो जाती है कि जीवन वैसे ही जीने-योग्य नहीं महसूस होता जैसे कि खाने में बारबार रेत, कंकड़, जन्तु या किरकिराहट निकलने पर खाने को छोड़ देने के लिए मन करता है। जैसे अंगूरों में ताज़गी होने पर भी यदि वे खट्टे हों, खीर अच्छी बनी होने पर भी यदि उसका तला लग गया हो, बर्फी ठीक बनी होने पर भी उसे काई लग गई हो, खाने के योग्य नहीं रहते, वैसे ही जीवन में सुख की सामग्री होने पर भी यदि मर्यादा न हो और उसके स्थान पर अमर्यादा आ गई हो तो यह जीवन तुच्छ, त्याज्य और सड़ा हुआ जैसे लगता है।

यदि एक मनुष्य गोरे रंग का और लालिमा लिये हुए है, उसकी मुखाकृति सुन्दर हो, उसने कोट-पेंट और नेकटाई से स्वयं को सुन्दर बना रखा हो परन्तु वह अन्दर में मैला, बदसूरत, चरित्रहीन और छिपा हुआ चोर, डाकू या संक्रामक रोग से पीड़ित हो तो वह व्यक्ति हमें भाता नहीं, वैसे ही समाज के विभिन्न स्तरों से यदि मर्यादा चट हो गयी हो तो वह समाज भी कचड़े-कबाड़े का एक ढेर-मात्र ही महसूस होता है या मतलबी, चालबाज और मक्कार लोगों का एक गिरोह मात्र ही महसूस होता है। यदि देखने में सभी तिलकधारी पंडित हों, कंधे पर उन्होंने दोपट्टा डाल रखा हो, हाथ या बगल में पोथी हो, मुख से वे राम-राम बोलें परन्तु मन में उनके मतलब की मूर्ति हो या पैसे की प्रतिमा हो तो वह पंडित-मंडली सुहाती नहीं, न ही उससे कथा सुनने का मन करता है, वैसे ही ऐसे व्यक्ति जो पक्के स्वार्थी हैं और जिनके मन में अपने ही मान-शान की उत्कट इच्छा हो और इसके लिए वे सज्जनता, भद्रता और मर्यादा की हत्या करने को भी उद्यत हों, व समाज के ध्वंस के निमित्त बनते हैं या उसे निकृष्ट बना देते हैं।

मर्यादा के बिना गाड़ी नहीं चल सकती

इस कालेकाल में भी हरेक देश की सरकार में हरेक कर्मचारी या अधिकारी का अपना-अपना स्थान और मान (Protocol) होता है। मंत्री का स्थान अपना, सचिव (Secretary) का अपना, क्लर्क का अपना और चपड़ासी का अपना। यों तो सभी मनुष्य हैं और उस नाते से सभी के साथ व्यवहार होना ही चाहिए परन्तु जब अधिकारी दफ्तर में आता है तो चपड़ासी उठ खड़ा होकर नमस्ते करता है और दरवाजा खोल देता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि अधिकारी अभिमान में आ जाये या चपड़ासी से डांट-डपट कर बात करे बल्कि इसका इतना ही भाव है कि चपड़ासी आये हुए वरिष्ठ व्यक्ति का आदर करे। यह तो वर्तमान समय की परिपाटी है। देवी-देवताओं की इससे भिन्न हो सकती है, योगी-जनों की भी अपनी प्रकार की मर्यादा हो सकती है परन्तु यदि 'मर्यादा' ही अनुपस्थित हो तो संघर्ष और मन-मुटाव होता है। 'राजा-भोज' का स्थान अपना और 'गंगू तेली' का स्थान अपना होता है—इस बात से तो इन्कार नहीं किया जा सकता। मर्यादा के बिना तो रेलगाड़ी पटरी से ही उतर जाएगी और दुर्घटना हो जाएगी। समुद्र यदि मर्यादा छोड़ दे तो नगर और ग्राम डूब जायेंगे और आबादियां वीरान हो जायेंगी। इसीलिए बड़ों और बुजुर्गों ने धर्माचारियों और हितैषियों ने मर्यादा से

चलनें की बात कही है। योगियों की मर्यादा, ईश्वरीय मर्यादा या दैवी मर्यादा तो सभी सभ्याताओं द्वारा पालन की गयी मर्यादाओं से भी श्रेष्ठ होनी चाहिए।

ईश्वरीय ज्ञान के अनुसार हम सभी आत्माएं भाई-भाई हैं और ब्रह्मावंशी होने के कारण 'भाई-भाई' 'भाई-बहन' अथवा 'बहन-बहन' हैं परन्तु पांचों अंगुलियां यद्यपि होती 'अंगुलियां' ही हैं और जुड़ी भी एक साथ में होती हैं तो भी उनका एक ही स्थान व एक ही कर्तव्य नहीं होता। वे भी अपनी-अपनी जगह होती हैं। कोई छोटी होती है, कोई बड़ी और हरेक का कार्य भी अलग-अलग है। कोई अंगुली तिलक लगाने के लिए अथवा अंगूठी पहनने के लिए निमित्त बनती है तो कोई अंगूठे के रूप में उस व्यक्ति की पहचान के लिए लाखों व करोड़ों रुपये की लिखत पर निशान लगाने के निमित्त बनती है। अतः 'भाई-भाई' या 'भाई-बहन' या 'बहन-बहन' होने के बावजूद भी पारस्पारिक सम्बन्धों में हरेक के स्थान और कर्तव्य के अनुसार हरेक का अपना-अपना दर्जा होता है। इसी को लेकर बाबा हमेशा कहते रहे हैं कि सभी बच्चे 'नम्बरवार' हैं और कि दैवी राज्य कायदे से चलता है। बाबा कहते, "बच्चे, 'सर्वखुल इदं ब्रह्म' से तो राज्य चल न सके और सृष्टि का कारोबार रुक जाये।

मर्यादाविहीन समाज अथवा संस्था छिन्नभिन्न

अतः ईश्वरीय ज्ञान और योग मार्ग पर चलने वाले बहन-भाईयों को जहां अपने आध्यात्मिक नियमों का पालन करना है, वहां मर्यादाओं का भी पालन करना है। **उत्तम मर्यादा ही हमें 'मर्यादा पुरुषोत्तम' बनाने वाली होगी। मर्यादा को तोड़ने से कलह-क्लेश पैदा होता, अनुशासन टूटता है, प्रशासन भी छिन्न-भिन्न हो जाता है। सब विधि-विधान कागज पर लिखे रह जाते हैं। परन्तु वह समाज अथवा वह संस्था जिसमें मर्यादाएं भंग हों। एक दिन आलोचना का या हंसी का या लोगों की दया का अथवा स्वयं में पश्चाताप का कारण बन कर रह जाती है।** मर्यादा ही किसी व्यवस्था की शोभी हुआ करती है, किसी परिवार की प्रतिष्ठा का कारण बनती है, किसी कुल को गायन-योग्य बनाती है और किसी राज्य को उदाहरण-योग्य स्थान दिलाती हैं।

मर्यादा का पालन करने और कराने के लिए बड़ों का कर्तव्य

स्वयं मर्यादा के अनुसार चलना और स्वयं से नीचे की रेखा के व्यक्तियों को मर्यादा के अनुसार चलने के लिए प्रेरित करना, शिक्षा देना, प्रोत्साहन करना, सावधान करना, वचन-बद्ध करना या उनमें उलंघन को रोकने के लिए साधन-संविधान अपनाना, बड़ों का कार्य होता है। यदि वे हरेक से न्याय से, स्नेह से, सहानुभूति से या कर्तव्य-पूर्वक व्यवहार नहीं करते तो गोया वो रेखा से नीचे वालों को मर्यादा भंग करने पर मजबूर करते है। यद्यपि अनुजों का यह कर्तव्य है और उनका यह भरसक प्रयत्न भी होना चाहिए कि वे शब्द-संयम का पालन करें और मर्यादा की लकीर के अन्दर रहें। परन्तु यदि वे आपे से बाहर हो जाते हैं तो बड़ों को भी देखना चाहिए कि किसी यदि मर्यादा-पालन की इच्छा के बावजूद मर्यादा को भंग किया तो उसका कारण क्या है? क्या ऊपर से तो मर्यादा-भंग नहीं हो रही है? यदि ऊपर से मर्यादा भंग नहीं हो रही तो नीचे मर्यादा भंग करने वालों को चलाने का ढंग शायद ऐसा होगा कि अव्यवस्था दोष उत्पन्न होने से वे मर्यादा भंग करने लगे होंगे। यदि ऐसा भी नहीं है तो अपनी दूषित प्रवृत्तियों के कारण वे मर्यादा भंग करने लगे होंगे। तब भी उनकी ऐसी वृत्तियों और प्रवृत्तियों को विराम देने का उपाय करने की जरूरत होगी। परन्तु एक बात तो निश्चित है कि जैसे दीवार बनाने वाला मिस्तरी धागे से लटकी हुई साहुल (Plumb-line) लगा कर देखता रहता है कि ईंट पर ईंट ठीक आ रही है या दीवार कहीं बाहर तो नहीं जा रही, अथवा टेढ़ी तो नहीं हो रही, वैसे ही किसी भी देश, समाज या संस्था के निर्माताओं को भी यह देखना चाहिए कि कहीं इमारत टेढ़ी तो नहीं बन रही वर्ना तो वह एक दिन ध्वस्त हो जायेगी और उसमें बसने वालों को भी मरघट पर ले जाने के निमित्त बनेगी।

हरेक देश, सरकार, संस्था या परिवार के लोगों को मालूम रहता है कि राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री या मेयर का क्या स्थान है। या माता-पिता, वरिष्ठ भाई-बहन या अनुजों का भी नम्बरवार क्या स्थान है। उसका पता ही न होना भी खतरनाक है और उसका पता होने पर मर्यादा को छोड़कर एक-दूसरे को धक्का देकर निकाल बाहर करना या उसकी चेष्टा करना खतरनाक है और ऐसा न करते हुए भी मर्यादा का विविध रूप से उल्लंघन करना भी भयानक स्थिति पैदा करता है। मर्यादा न रहने पर कोई हड़ताल करता, नारे लगाता, बड़ों को अपमानित करता ,उनकी आज्ञा भंग करता और स्वार्थ को लेकर या अपनी मान-शान का झण्डा बुलन्द करके शोरोगुल करता है। देश और समाज में इस प्रकार हाहाकार मच जाती है। यह हाल छोटे स्तर पर परिवारों का, दफ्तरों का या संस्थाओं का भी होता है। अगर पुराण में कलियुग के बताये गये इस लक्षण के अनुरूप कि कलियुग में कन्या अपने मुंह वर मांगेगी —किसी समाज या संस्था के व्यक्ति अपने लिये स्वयं ही पद या उपाधि मांगना शुरू कर देते हैं तो समझना चाहिए कि ऐसे लोग कलियुग की स्थापना करने वाले हैं।

अब शिवबाबा की कमाल है कि वे हमें

इन अमर्यादाओं से अवगत करते हुए उत्तम मर्यादा की ओर ले चल रहे हैं। इन्हीं मर्यादाओं का पालन करना ही प्रीति-बुद्धि व्यक्ति का लक्ष्ण है और न पालन करना विपरीत बुद्धि का लक्ष्ण है – यह समझ अब हमें मिल चुकी है। इसको सामने रखते हुए अब हरेक को अपने-अपने स्थान और सम्बन्ध के अनुसार उत्तम मर्यादा का पालन करना चाहिए।

कुछ वर्ष पहले हम ने एक लेख में कहा था कि ईश्वरीय ज्ञान, सहजराजयोग, दिव्यगुणों की धारणा तथा ईश्वरीय सेवा के अतिरिक्त 'सहयोग' भी हमारा एक पांचवा अध्ययन विषय है। मर्यादा-पालन के विषय पर भी हम पहले कई बार लिख चुके हैं। परन्तु सत्यता यह है कि मर्यादा भी हमारा एक अध्ययन-विषय अथवा अभ्यास विषय है। उत्तम मर्यादा का पालन किये बिना भी सतयुग में देवकुल और राज्यकुल में राज्य-भाग्य प्राप्त करना सम्भव नहीं है। निर्विकार और दिव्यगुण सम्पन्न बनने के साथ-साथ मर्यादा पुरुषोत्तम बनना भी हमारे लक्ष्य में शामिल है। यहां तक कि जो मर्यादा भंग करने वाले हैं, उनके इस कार्य में साथी बनना भी ईश्वरीय विरासत से स्वयं को वंचित करना है

— जगदीश

बड़ौदा : डेरी उपसेवाकेन्द्र पर ब्र० कु० अन्नु बहन आध्यात्मिक कार्यक्रम में प्रवचन करती हुई। साथ में ब्र० कु० राज व बड़ौदा डेरी के मेनिजिंग डायरेक्टर उपस्थित हैं।

बसई : नागेश्वर मंदिर के ट्रस्टी भ्राता वासुदेव जी राजयोग प्रदर्शनी देखने के बाद ब्र० कु० बहनों के साथ

खण्डवा : सेवाकेन्द्र पर खाद्य आपूर्ति उप-मन्त्री माननीय नरेलाल माटाजी अपने अनुभवयुक्त विचार व्यक्त करते हुए साथ में ब्र० कु० हंसा बहन बैठी है।

बंबई (गामदेवी) सेवाकेन्द्र की ओर से रोटरी क्लब (दक्षिण) बंबई में ब्र० कु० कुसुम बहन प्रवचन करती हुई। साथ में रोटरी क्लब के अध्यक्ष भ्रा. राजपाल जी बैठे हैं।

यादगीर (कर्नाटक) : आध्यात्मिक कार्यक्रम में माननीय गंगाधर स्वामी अपने विचार प्रगट कर रहे हैं। साथ में आचार्य रत्न तोरेन्द्र शिवाचार्य स्वामीजी तथा अन्य अतिथिगण विराजमान हैं।

क्या परमात्मा है? वह क्या करता है और क्या नहीं करता है?

परमात्मा के अस्तित्व और कर्तव्यों के विषय में कई शताब्दियों से लोग प्रायः जो प्रमाणं और युक्तियां पेश करते आये हैं, वह ठोस विवेक और अनुभव द्वारा समर्थित नहीं हैं। अतः उनको जानकर भी बहुत-से लोगों को परमात्मा के अस्तित्व में विश्वास नहीं होता। अन्य कई लोग जिन्हें विश्वास होता है, वे इन मन्तव्यों को आधार बनाकर कई अनुचित बातें परमात्मा के बारे में कहते और मानते हैं और उनके व्यवहार तथा पुरुषार्थ में भी कई विवेक-विरुद्ध और अनुचित बातें हैं। आप देखेंगे कि प्रायः चार-छः ही प्रमाण परमात्मा के अस्तित्व के विषय में मुख्य रूप से अब तक दिये जाते रहे हैं और उनमें परमात्मा को एक संसारी, तथा सदा-व्यस्त व्यवहारी माना गया है और उसे काम आदि वासनाओं को भोगने की थोड़ी-बहुत स्वीकृति और सामग्री तथा साधन देने वाला भी माना गया है। अब हम इनमें से कुछेक प्रमाणों पर थोड़ा विचार करेंगे और यह भी सोचेंगे कि प्रेक्टीकल जीवन पर इनका क्या प्रभाव पड़ता है।

१. क्या परमात्मा संसार को बनाता है?

शताब्दियों से परमात्मा के अस्तित्व के बारे में यह प्रमाण दिया जाता रहा है कि—"इस अद्भुत संसार को देखकर यह मानना पड़ता है कि इसका कोई अत्यंत बुद्धिमान, शक्तिमान् और सुयोग्य निर्माता है। वह निर्माता ही परमात्मा है। मनुष्य के शरीर की अद्भुत बनावट को देखकर अथवा वृक्ष, वनस्पति आदि को देखकर भी यही अनुमान होता है कि इनको बनाने और उगाने वाली कोई सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् सत्ता है। वही परमात्मा है। उसने ही इस संसार को बनाया, उसने ही शुरू में भी मनुष्य को पैदा किया, उसने ही शुरू में भी वृक्षादि लगाये और अब भी वही उन्हें हमारे लिए पैदा करता है। वह सर्वज्ञ परमात्मा रूप-रहित, सर्वव्यापक और संपूर्ण है और आनंद का सागर है। बादलों में गर्जन उसी की है, सागर की लहरों में वही बस रहा है, वही वर्षा बरसाता है, वही सूर्य को चमकाता है, वही बादलों में बिजली को चमकाता या पर्वत तथा नदियां बनाता है। आज भी जो इस प्रकार की चीजें बनती हैं या विनाश को प्राप्त होती हैं, वे सर्वशक्तिमान् परमात्मा द्वारा ही रची जाती या नष्ट की जाती हैं।" अब सोचने की बात है कि क्या परमात्मा के अस्तित्व को मानने का यह आधार अथवा यह युक्ति ठीक है? निम्नलिखित पर विचार करने पर आप देखेंगे कि यह युक्ति गलत है और इस आधार में त्रुटियां हैं।

अनादि सृष्टि का कोई रचयिता कैसे हो सकता है?

ऊपर जो मत व्यक्त किया गया है उसके विषय में प्रश्न हो सकता है कि परमात्मा ने शुरू में बीज बनाये या वृक्ष? यदि कोई कहे कि 'बीज बनाये' तो प्रश्न उठेगा कि बीज तो वृक्ष से ही पैदा होते हैं, तब भला परमात्मा ने बीज के बिना वृक्ष कैसे पैदा किए? इसी प्रकार, यदि कोई कहे कि परमात्मा ने शुरू में मनुष्य पैदा किये तो प्रश्न उठेगा कि नर-नारी तो अति कोमल शिशु के रूप में अपने माता-पिता ही के संयोग अथवा सम्भोग से पैदा होते हैं, परमात्मा ने मनुष्यों के बीज अथवा माता-पिता के बिना नर-नारी कैसे पैदा किए? इनका उत्तर कोई नहीं दे सकता। अतः यह मानना होगा कि परमात्मा है तो सही परंतु उसका कार्य वृक्षादि पैदा करना या नर-नारी बनाना नहीं है बल्कि बीज और वृक्ष का सिलसिला अथवा माता-पिता तथा शिशु का सिलसिला तो अनादि है और परमात्मा स्वयं भी अनादि है। इस सिलसिले को अनादि न मानने से तो प्रश्न उठेगा कि परमात्मा को किसने बनाया? सभी आस्तिक लोग कहेंगे कि परमात्मा को किसी ने नहीं बनाया; वह तो अनादि है। इसी प्रकार मानना पड़ेगा कि बीज और वृक्ष का सिलसिला अथवा माता-पिता और शिशु का सिलसिला भी अनादि है, उन्हें परमात्मा ने नहीं बनाया। परमात्मा सृष्टि के शुरू से लेकर अंत तक इसी सांसारिक कार्य-व्यवहार में लौकिक मनुष्यों, मालियों अथवा माता-पिता की तरह नहीं लगा रहता बल्कि उसका कार्य इससे भिन्न और अत्यंत महान् है। वह क्या महान् कार्य करता है, हम आगे चलकर स्पष्ट करेंगे।

क्या शरीर और वृक्ष परमात्मा पैदा करता है?

परंतु यहां इतना स्पष्ट करना जरूरी है कि शरीर सदा से माता-पिता के संयोग अथवा सम्भोग ही से पैदा होता आया है। दोनों प्रकार के जीवाणु ही मिलकर और बाद में बहुसंख्यक होकर, कार्य बांटकर आंख, कान, नाक आदि शरीर-भाग अथवा शरीर बनाते हैं। शरीर-विज्ञान से इस विषय का बहुत स्पष्ट परिचय मिलता है और इस क्रिया को कोई भी जान तथा देख भी सकता है। आप जरा सोचिए कि जब बत्तख अथवा चिड़िया अपने लिए घोंसला बना सकते हैं, जब मधुमक्खी अपने लिये छत्ता बना सकती है तो क्या अनेकानेक जीवाणु मिलकर शरीर नहीं बना सकते? यदि शरीरों को बनाने वाला परमात्मा को माना जाये तो क्या सांप और न्योले तथा चूहे और बिल्ली जैसे परस्पर विरोधी स्वभाव के जीवों के शरीरों को परमात्मा ने बनाया? क्या परमात्मा ऐसा है? इसी प्रकार वृक्ष के रूप में उगने की सारी शक्तियां भी बीज में ही समाई होती हैं और वह

अनुकूल ऋतु, वातावरण तथा साधन पाकर वृक्ष के रूप में विकसित होती हैं। यदि परमात्मा ही शरीरों को पैदा करता हो तब तो उससे ही प्रार्थना करनी चाहिये कि–"हे भगवान् आज जो जनगणना भयंकर रूप से दिनोंदिन बढ़ती जा रही है, इसे आप बंद करो। तब इसके लिये ब्रह्मचर्य-पालन या सन्तति निरोध के किसी तरीके को अपनाने की चर्चा तथा पुरुषार्थ ही व्यर्थ है। यदि परमात्मा ही वृक्ष तथा खेती उगाता हो तब तो आज के अन्न संकट में अन्य सब प्रयत्न छोड़कर केवल उससे ही प्रार्थना करनी चाहिये कि–"हे भगवान् आप हमारे लिये अधिक अन्न उपजाओ।" परंतु यह तो वास्तव में मनुष्यों के अपने कर्मों पर निर्भर है। अतः यह कहना कि परमात्मा ही पेड़ उगाता है और सभी जीवों का शरीर पैदा करता है, विवेक-संगत नहीं है। यही कारण है कि इन विज्ञानों को जानने वाले बहुत-से लोगों को परमात्मा के अस्तित्व में दिया गया यह प्रमाण नहीं जचता।

नदियों के बारे में भी यही कहा जा सकता है कि पहाड़ों पर जो बर्फ पिघलती है अथवा जो वर्षा होती है, उसका पानी नदी के रूप में बहता है और बहता आया है। यह कहना कि उन्हें परमात्मा ने बनाया है या वह ही सागर की लहरों में है, मनुष्य की अज्ञानता है। बादल भी सूर्य के ताप से बनते हैं, यह बात भूगोल तथा फ़िजिक्स में प्रायः पढ़ाई जाती है। अतः परमात्मा के अस्तित्व का यह प्रमाण देना कि इनको बनाने वाला कोई सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, निराकार, आनंद स्वरूप परमात्मा होना चाहिये त्रुटिपूर्ण प्रमाण है।

निराकार होने से परमात्मा साकार चीजें नहीं बना सकता

इसके अतिरिक्त यह भी प्रश्न है कि–"जबकि आप कहते हैं कि परमात्मा अव्यक्त, निराकार और अरूप है तो उसने सूर्य, चांद, पृथ्वी इत्यादि साकार एवं स्थूल चीजों को कैसे बनाया? किसी भी चीज अथवा आकार को बनाने के लिए तो हाथ या अन्यान्य उपकरण अथवा साधन चाहिये। जबकि परमात्मा के कोई हाथ-पांवों या उपकरण आदि ही नहीं हैं तो परमात्मा ने इस सृष्टि को कैसे बनाया? यदि आप कहें कि "जैसे बिजली की शक्ति से चीजें बनाई जाती हैं वैसे ही अव्यक्त परमात्मा की प्रेरणा शक्ति से सूर्य, चांद या यह सारा संसार बना", तो आपको सोचना चाहिये कि बिजली भी किसी माध्यम द्वारा ही कार्य कर सकती है। बिजली भी किसी तार, मशीन, सांचे या ढांचे के द्वारा ही चीजों को अथवा उनके रूप-रंग के निर्माण को संभव कर सकती है वरना नहीं। यदि आप कहें कि परमात्मा ने किसी माध्यम द्वारा संसार बनाया तो प्रश्न उठेगा कि उस माध्यम को किसने और कैसे बनाया? अतः यह कहना कि निराकार परमात्मा ने यह साकार जगत् या सूर्य तारागण आदि बनाये, यह गलत विचार है; यह किसी भी तरह सिद्ध नहीं हो सकता।

सृष्टि के उद्देश्य और गुणों पर विचार करने से सिद्ध है कि इसे परमात्मा ने नहीं बनाया

पुनश्च, प्रश्न यह भी है कि यदि यह संसार परमात्मा ने बनाया है तो भला **किस उद्देश्य** से बनाया है? प्रचलित मान्यताओं को मानने वाले कई लोग इसके उत्तर में कहते हैं कि–"परमात्मा ने देखा कि मैं अकेला हूं, इसलिए उसे इच्छा हुई कि अनेकता को रचकर खेल खेलूं।" इस उत्तर पर आप किंञ्चित विचार कीजिये। इच्छा तो तभी होती है जब किसी चीज की कमी होती है, तो क्या परमात्मा अपूर्ण है कि उसे इच्छा हुई? प्रचलित मान्यताओं में विश्वास करने वाले लोग यह तो मानते नहीं कि परमात्मा अपूर्ण है बल्कि वे तो कहते हैं कि परमात्मा पूर्ण है। तब तो उसे इच्छा भी नहीं हो सकती। दूसरे, यह तो बच्चों की-सी बात है कि अपने हास और खेल के लिए उसने ऐसा संसार बनाया जिसका अन्य कोई प्रयोजन ही नहीं और क्या उसने यही संसार बनाया जिसमें आजकल मनुष्य दुःखी है?

अन्य कई लोग कहते हैं कि–"परमात्मा ने संसार को इसलिये बनाया कि जीवात्माओं की इसमें उन्नति हो और वे मुक्ति तथा जीवनमुक्ति के लिए पुरुषार्थ कर सकें।" इस पर भी सोचने की बात है कि हम तो संसार में देखते हैं कि आत्माओं की दिन-प्रतिदिन अवनति तथा दुर्गति ही हो रही है, न कि उन्नति। वे तो कर्मों और विकर्मों के बंधन में दिनोंदिन अधिक ही जकड़ती जा रही हैं और अत्यंत वृद्ध तथा दुःखपूर्ण अवस्था को प्राप्त होती जा रही हैं और वे परमात्मा से विपरीत बुद्धि और विमुख ही होती जा रही हैं और धर्म तथा कर्म पर से उनका ध्यान हटता जा रहा है। अतः ऊपर दिया गया उत्तर भी ठीक नहीं है।

कई लोग यह भी कहते हैं कि–"परमात्मा ने संसार को अन्य आत्माओं के लिये बनाया ताकि वे इसमें अपने कर्मों का फल, सुख या दुःख के रूप में भोग सकें।" परंतु परमात्मा को क्या पड़ी थी कि वह इस झंझट में पड़ा?–इसका उत्तर वे भी नहीं दे सकते? वास्तव में तो यह सृष्टि सुख-दुःख का एक अनादि खेल है जिसमें मनुष्यात्माएं स्वभाव से खेलने आती हैं और अपने कर्मों के अनुसार फल भोगती हैं।

पुनश्च, प्रश्न यह भी उठता है कि यदि परमात्मा **निर्गुण** है और यदि उसमें कोई भी गुण नहीं हैं "जैसे कि कई लोग कहते हैं, तब तो यह संसार भी **निर्गुण** होना चाहिये क्योंकि रचयिता के गुण तो अपनी रचना में आया ही करते हैं परंतु हम देखते हैं कि यह संसार सुख का या दुःख का साधन है और इसमें गुण हैं। अतः यह किसी निर्गुण परमात्मा द्वारा रचा हुआ नहीं हो सकता। यदि परमात्मा **सगुण** है, जैसे कि कई लोग मानते हैं; वो अविनाशी, अपरिवर्तनीय **सदा आनंद स्वरूप**, परम बुद्धिमान् एवं सर्वशक्तिमान् परमात्मा द्वारा रची हुई सृष्टि में कभी भी दुःख नहीं होना चाहिये परंतु आज के संसार में तो हम देखते हैं कि दुःख है। **अतः किसी भी रीति से हम इस स्थूल संसार को अर्थात् सूर्य और चांद आदि भी परमात्मा द्वारा रचा हुआ नहीं मान सकते और हम परमात्मा के अस्तित्व को यह कहकर सिद्ध नहीं कर सकते कि "इस संसार का रचयिता कोई अवश्य है" क्योंकि वास्तव में यह संसार अनादि है और आत्माओं के फल के अनुरूप इसमें गुण परिवर्तन होता रहता है : इसमें हर चीज कारण-कार्य के अनादि सिलसिले में बंधी हुई है, जो सिलसिला कि चक्राकार है : जो भी**

वृत्तांत यहां होता है उसका कुछ कारण अवश्य होता है फिर वह वृत्तांत आने वाले अन्य वृत्तांत का कारण बन जाता है, फिर दूसरा वृत्तांत अपने से आगे आने वाले तीसरे वृत्तांत का कारण बन जाता है, तीसरा फिर अपने से आगे आने वाले चौथे वृत्तांत का और, इस तरह, अंतिम वृत्तांत सबसे पहले वृत्तांत का कारण बन जाता है और इस प्रकार यह संसार अनादि काल से चक्रवत चलता रहता है।

परमात्मा है अवश्य

हां, परमात्मा है अवश्य और वह 'रचयिता' भी है परंतु वह सूर्य, तारागण, पृथिवी आदि का रचयिता नहीं है। परमात्मा का कार्य शरीर अथवा वृक्षादि पैदा करना नहीं है बल्कि अन्य अति महान् कार्य है। वह कार्य यह है कि जब कलियुग के अंत में सृष्टि में धर्म की ग्लानि होती है, भ्रष्टाचार बढ़ जाता है, पापाचार अपनी चरम सीमा पर होता है तब परमात्मा इस सृष्टि में अवतरित होकर मनुष्यों को वह ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग सिखाते हैं जिससे बहुत मनुष्यों का आचार, विचार और आहार-व्यवहार सतोगुणी बनता है और उनके स्वभाव तथा कर्मों के प्रभाव से प्रकृति में भी सतोगुणी जागृत होता है और सृष्टि, तमोगुणी पतित तथा आसुरी एवं कलियुगी अवस्था से बदलकर सतोगुणी, पावन तथा दैवी सतयुगी अवस्था वाली ही जाती है। इस महान् परिवर्तन लाने के कारण अथवा पुरानी सृष्टि में से तमोगुण के स्थान पर सतोगुण की स्थापना का निमित्त बनने के कारण परमात्मा को नई (सतयुगी) सृष्टि का 'रचयिता' कहा जा सकता है न कि सूर्य, चांद आदि बनाने के कारण।

यह कार्य वह प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रवेश करके हर कल्प मे एक बार, कलियुग के अंत में किया करते हैं और अब कर रहे हैं। यह कार्य अन्य कोई महात्मा आदि भी नहीं कर सकता जैसा कि आज की परिस्थिति में भी हम देख रहे हैं कि अब इसका सुधार मनुष्यों की शक्ति से बाहर है। यह कार्य जो करता है, वही सर्वशक्तिमान् पतित-पावन, सुख-शांति के दाता परमपिता परमात्मा हैं। परमात्मा के अस्तित्व का यह मुख्य प्रमाण है जो कि वर्तमान समय में अनुभव भी किया जा सकता है क्योंकि अब परमपिता परमात्मा प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा ज्ञान तथा योग सिखाकर नर-नारियों को विकारों पर विजय प्राप्त करा रहे हैं, तमोगुणी से सतोगुणी बना रहे हैं, अपने अस्तित्व का अनुभव भी करा रहे हैं तथा अपने कर्तव्यों द्वारा अपना परिचय भी दे रहे हैं। इस रहस्य को न जानने के कारण आज लोग समझते हैं कि परमात्मा सर्वव्यापी है, वह सूर्य, चांद आदि का रचयिता है और वह यह रचना का कार्य सारा कल्प करता ही रहता है। वास्तव में यह मिथ्या मान्यता हैं क्योंकि न तो परमात्मा सर्वव्यापक है, न ही वह स्थूल जगत् को बनाता है क्योंकि वह निराकार है और न ही सर्वव्यापी एवं निराकार परमात्मा साकार हो सकता है।

आप देखेंगे कि जो लोग यह मानते हैं कि परमात्मा ने इस स्थूल सृष्टि को बनाया, वे उसकी रचना के विषय में अनेकानेक विवेक-विरुद्ध बाते कहते हैं। उदाहरण के तौर पर कई लोग तो कहते हैं कि विष्णु जी क्षीर सागर में शेष नाग पर लेटे हुए थे। उनकी नाभी से कमल निकला : कमल पर ब्रह्मा पैदा हुआ है। ब्रह्मा और विष्णु में कई कल्पों तक परस्पर लड़ाई चलती रही। ब्रह्मा कहता था कि मैं तेरा पिता हूं और विष्णु कहता था कि मैं तेरा पिता हूं। बाद में ब्रह्मा ने सृष्टि रचना शुरू किया। वे अपनी पुत्री सरस्वती पर मोहित हो गये। उनकी कई संतानें पैदा हुईं। ब्रह्मा ने अपनी गालों से अमुक–की सृष्टि रची, हाथों से अमुक को पैदा किया आदि-आदि। अन्य कई लोग कहते हैं कि परमात्मा ने सृष्टि के आदि में केवल युवा ही अवस्था वाले नर-नारियों को पैदा किया (बहुत-से आर्यसमाजी ऐसा कहते हैं)। आप ही सोचिये कि सब युवा अवस्था वाले ही कैसे पैदा हो गये? अन्य कई कहते हैं कि गॉड (God) अथवा खुदा ने कहा, "प्रकाश हो जावे, तो प्रकाश पैदा हो गया। उसने कहा–"पानी हो जाये", तो पानी पैदा हो गया। (ऐसे ईसाई और मुसलमान आदि मानते हैं)। आप किञ्चित सोचिये कि नेस्ति से भला अस्ति कैसे हो गई? अन्य कई कहते हैं कि परमात्मा ने महत्तत्व से बुद्धि, अहंकार, मन आदि पैदा किए। परंतु मन और बुद्धि आत्मा से अलग नहीं हैं और प्रकृतिकृत भी नहीं हैं, बल्कि ये तो आत्मा ही की मनन, चिंतन, निर्णय इत्यादि शक्तियों के नाम हैं। तो किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता कि परमात्मा ने इस सृष्टि को रचा।

जो लोग यह मानते हैं कि परमात्मा ने इस सृष्टि को रचा और कि वही आजतक भी निर्माण कार्य में लगा रहता है और वही सभी के शरीरों को बनाता है, वे बहुत-सी अनुचित बातें मानते हैं। उदाहरण के तौर पर वे कहते हैं कि–"जबकि नर और नारी, दो प्रकार के शरीरों को परमात्मा ने रचा और उनकी इस विशेष प्रकार की शारीरिक बनावट बनाई तो इसका अर्थ यह है कि काम आदि वासनाओं को भोगना पाप नहीं है। वे इसे जीवन में स्वाभाविक मानते हैं। परंतु हर कोई समझ सकता है कि काम से तो क्रोध पैदा होता है और अन्य विकार भी पैदा होते हैं और इन्हीं विकारों से सब दुःख उत्पन्न होते हैं। अतः इसका अर्थ तो यह हुआ कि परमात्मा ने जानबूझकर हमारे साथ दुःख का साधन लगा दिया और उसके साथ विकारों के लिए छूट दे दी। तो इन लोगों के मन्तव्य का तो यह भाव हुआ कि जबकि ईश्वर ने ही विकारों का साधन बनाया और भोगने के लिए यह संसार रचा, तो फिर इन विकारों से छूटने का पुरुषार्थ करने या इस संसार से मुक्ति प्राप्त करने का यत्न करने की कोशिश करना ही फालतू है? तब तो परमात्मा ही दुःख-दाता सिद्ध हुआ, वह ही विकारों का प्रेरक हुआ। वह सारा कल्प शरीरों को बनाने वाला, सबसे बड़ा संसारी-व्यवहारी और माया जाल फैलाने वाला, दुःख का कारण हुआ! **बताइये, परमात्मा के बारे में यह सब मानना कितना अनर्थ है! जबकि महात्मा भी ऐसा कार्य नहीं करते तो क्या परमात्मा ऐसा कार्य भला कर सकता है?**

हम देखते हैं कि बहुत से कर्मों का फल मनुष्य को शीघ्र ही स्वतः मिल जाता है। उदाहरण के तौर पर एक आदमी दूध का एक गिलास भरकर रखता है और फिर असावधान होकर चलता है तो

उसकी असावधानी के फलस्वरूप गिलास के उलट जाने से दूध गिर जाता है। एक मनुष्य धूप में अपने सिर को ढककर नहीं चलता। उसका शरीर स्वस्थ और सुदृढ़ नहीं है, उसमें सहनशक्ति कम है, उसे धूप हानि पहुंचाती है। तो क्या मनुष्य को यह सब कर्म-फल परमात्मा देता है? इसी प्रकार हम देखते हैं कि मनुष्य बहुत-से कर्मों का फल भय, चिंता आदि के रूप में स्वप्न में भी पाता है तथा अपने चिड़चिड़े और चिंतायुक्त स्वभाव के कारण भी मानसिक दुःख के रूप में तुरंत ही पीता रहता है? क्या ये सब फल उसे परमात्मा द्वारा मिलता है?

आप देखेंगे कि सब प्रकार से यह मानना गलत है कि परमात्मा ही मनुष्य को उसके कर्मों का फल देता है। भला आप सोचिये कि जब स्वामी दयानंद ने भी विष देने वाले को छोड़ दिया, ईसा ने सूली पर चढ़ाने वालों को क्षमा कर दिया, महात्मा बुद्ध ने विरोधियों को तथा गाली देने वालों को उनके अपराध का दंड देने की चेष्टा नहीं की तो सदा आनंदस्वरूप, शांतिस्वरूप, प्रेमस्वरूप, दयालु, कृपालु परमात्मा भला मनुष्य को दंड अथवा दुःख देने का कर्तव्य रचकर फिर आत्माओं का शरीर (जैसे कि ये लोग मानते हैं) वह इस बात का अधिकारी ही कैसे हो सकता है कि उन्हें दंड दे? **क्या परमात्मा ही मनुष्य के कर्म-फल के रूप में उसे रोग देता है? क्या वही कर्म-फल के रूप में किसी मनुष्य को नदी में डुबोता या किसी द्वारा किसी को मरवाता या किसी द्वारा बम रखवाकर रेलगाड़ी बैठे यात्रियों को उनके कर्मों के परिणामस्वरूप उन्हें मरवाता है? ऐसा मानना तो गोया के परमात्मा के गले में झंझट डालता है।**

लोगों की हालत देखिए कि परमात्मा की महिमा करते-करते उन्होंने उल्टे उसे दुःख देने वाला, रोग और शोक देने वाला मान लिया है! यह तो गोया परमात्मा की उल्टी माला फेरना है!! इस अनुचित मन्तव्य को मानकर ही लोग परमात्मा पर दोष लगाते हैं। जब कोई मर जाता है तो कहते हैं कि परमात्मा की ऐसी ही इच्छा थी! यहां पूना में एक बार बंध टूट जाने पर यहां के एक मंत्री ने लोकसभा में एक सदस्य के यह पूछने पर कि बंध कैसे टूटा, उत्तर देते हुए कहा—"It was an act of God" अर्थात् ईश्वर की इच्छा से अथवा ईश्वर द्वारा ऐसा हुआ। इसका मतलब यह हुआ कि बंध टूटने से जो इतना भारी नुकसान हुआ और इतने लोग मरे, यह सब परमात्मा ने ही मारे और उसने ही नुकसान किया। देखिये, यह मानकर कि परमात्मा सृष्टि में चीजें बनाता और नष्ट करता है और वही दुःख के रूप में कर्म-फल देता है, इससे लोगों के व्यवहार में कितना अनौचित्य आया है और वह परमात्मा की कितनी ग्लानि करने लगे हैं। ■

दिल्ली (केशवपुरम) : सेवाकेन्द्र की ओर से ब्र० कु० लक्ष्मी बहन संसद सदस्य भ्राता भरतसिंहजी को प्रदर्शनी के चित्रों की व्याख्या दे रही है।

एकता में सुख है अनेकता में दुःख।

दरभंगा : एक आध्यात्मिक कार्यक्रम में भ्रा. धुरेन्द्रनाथ झा (सुमन) जी, भूतपूर्व संसद सदस्य, एवं ब्र० कु० रानी बहन, अरुणा आदि खड़े हुए हैं।

सम्पूर्ण स्वास्थ्य

स्वास्थ्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। स्वास्थ्य एक बहुमूल्य वस्तु है जिसको धन और विज्ञान के माध्यम से नहीं खरीदा जा सकता है। स्वास्थ्य का महत्व केवल कुछ दशकों से ही बढ़ा है। यह महसूस किया जाने लगा है कि विषैले पदार्थों का वातावरण में फैलाना, उद्योगिक सामग्रियों द्वारा विषैलापन, अधिक जनसंख्या और गंदे वातावरण से स्वास्थ्य के स्रोतों में तनाव पैदा हो गया है। खतरनाक कीट और बैक्टेरिया कृषि औषधियों और मेडिसिनिल ड्रग्स पर अपनी इम्युनिटी (प्रतिरोध) बनाते जा रहे हैं इससे औषधियों का प्रभाव कम होता जा रहा है। इसलिए औषधियों की मंहगाई के कारण स्वास्थ्य की कीमत बढ़ती जा रही है। उपरोक्त परिस्थितियों को देखते हुए यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य की रक्षा के लिए कोई नया तरीका निकाला जाए। जिस प्रकार उर्जा के क्षेत्र में पैट्रोलियम पदार्थों की मंहगाई को देखते हुए वैज्ञानिक पैट्रोलियम की जगह पर दूसरे उर्जा के स्रोतों को खोज रहे हैं। इसी प्रकार स्वास्थ्य जगत में स्वास्थ्य की रक्षा के लिए किसी दूसरे उर्जा के स्रोतों की आवश्यकता है जिससे मनुष्य-जाति को औषधियों का विकल्प मिल सके।

शारीरिक रूप से स्वस्थ कौन?

स्वास्थ्य की परिभाषा को स्पष्ट करते हुए विश्व स्वास्थय संस्थान ने शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य का वर्णन किया है। हर व्यक्ति शरीर को तन्दरुस्त रखना चाहता है। किन्तु अधिकांश लोग मानते हैं कि शरीर हृष्ट-पुष्ट होना तथा बुखार दर्द आदि का न होना ही शारीरिक स्वास्थ्य के लक्षण हैं ऐसा मानना एक गम्भीर भूल है क्योंकि रोग पानी में तैरते हुए एक बर्फकी भांति है। जैसे तैरते बर्फ के पहाड़ का थोड़ा सा हिस्सा ही पानी के ऊपर दिखायी देता है वैसे ही शारीरिक रोग का थोड़ा सा भाग ही रोग के लक्षण के रूप में महसूस होता है।

शारीरिक स्वास्थ्य को अच्छा रखने के लिए प्रमाण नींद, संतुलित पौष्टिक भोजन एवं स्वास्थ्य वर्धक आचार विचार की आवश्यकता है जिसके फलस्वरूप शारीरिक वजन, श्वसन, रक्त चाप आदि व्यक्ति की आयु, जाति एवं ऊँचाई के अनुसार बना रहे।

मानसिक रूप से स्वस्थ कैसे बने?

विपरीत परिस्थितियों में भी मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति मानसिक

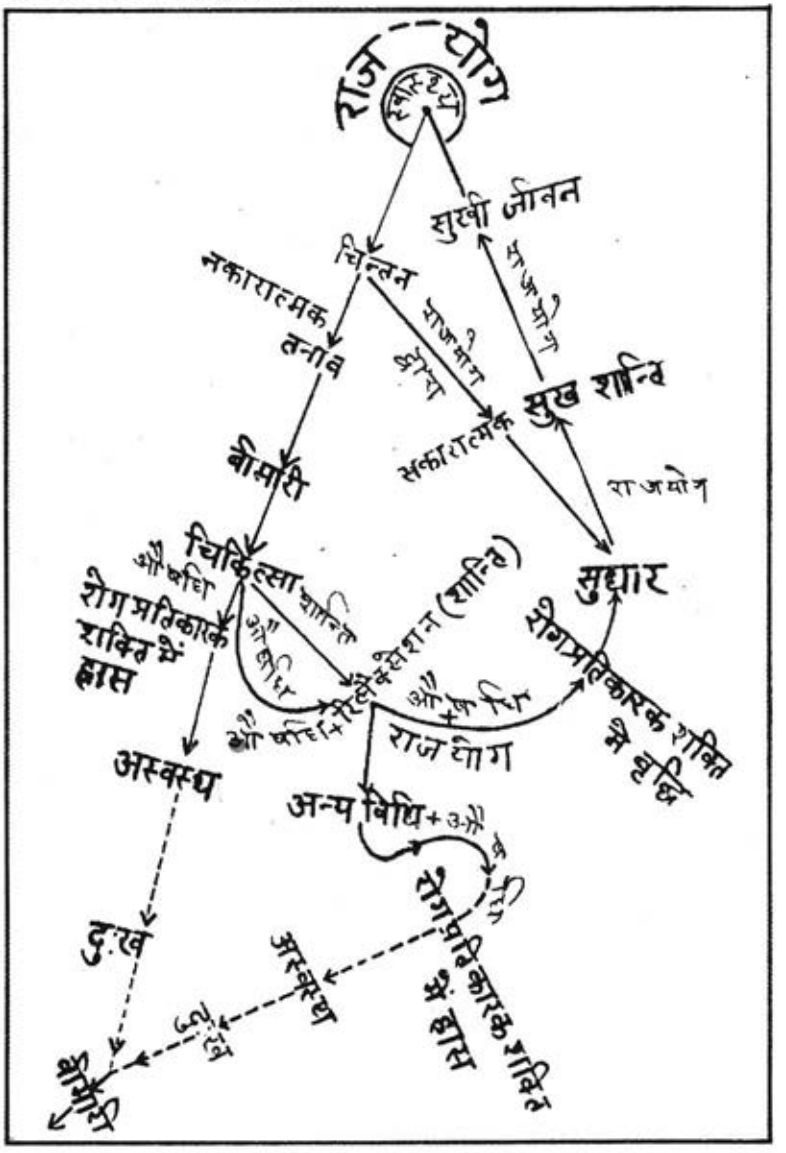

एवं बौद्धिक संतुलन बनाए रख सकता है। वह अपनी कमी को स्वीकार करता है। एवं अपनी कमजोरियों को दूर करने का प्रयास करता है। वह भय, हताश, क्रोध आदि के वश नहीं होता। अध्यात्मिक ज्ञान को समझकर जीवन में अपनाने से शुभ चिन्तन की कला प्राप्त होती है एवं मनोबल में वृद्धि होती है। इसलिए समस्याओं की अग्नि के मध्य में भी राजयोगी मानसिक संतुलन बनाए रख सकता है।

सामाजिक स्वास्थ्य का आधार

परिवार एवं समाज में शान्ति, प्रेम तथा सहिष्णुता की स्थापना के लिए व्यक्ति को सामाजिक रूप से स्वस्थ होना चाहिए। सामाजिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति माता पिता के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाता है। बच्चों के विकास में सहयोगी बनता है एवं चिरस्थायी मित्रता को निभाता है। वह सामाजिक हानि को रोकने में मदद करता है। और अपने अनुभव से अन्य आत्माओं को भी सुख शान्तिमय जीवन की राह दिखाता है।

तनाव एवं अन्तःश्राव प्रणाली

चिन्ताओं का हाइपोथैलमस पर गहरा प्रभाव पड़ता है जो पिट्यूटरी के श्रावों के लिए वृद्धिकारी एवं न्यूनाताकारी अँश निर्माण करता है। पिट्यूटरी के श्रावों में अव्यवस्था उत्पन्न होने से अत्यन्त श्राव अर्थात इन्डोक्राई ग्रन्थियों में अव्यवस्था उत्पन्न होती है। इसके कारण विभिन्न शारीरिक अवयव भी व्यवस्थित कार्य नहीं करते। इस प्रकार अन्तःश्राव प्रणाली की अव्यवस्था अनेक रोगों को निमंत्रण देने का कारण बनती है। फिर से शरीरिक रोग, चिन्ता तथा तनाव में वृद्धि करते हैं। इस प्रकार चिन्ता एक विष-चक्र का निर्माण करती है।

आटोनामिक नर्वस सिस्टम में असंतुलन

पाचन क्रिया, श्वसन क्रिया और हृदय प्रक्रिया आदि का कार्य स्वाभाविक रूप से चलता ही रहता है। इन क्रियाओं का नियमन, स्वायत्व तंत्र प्रणाली अर्थात् आटोनामिक नर्वस सिस्टम द्वारा होता है। इस प्रणाली के सिम्पैथैटिक एवं पैरा सिम्पैथेटिक भाग विभिन्न अंगों की कार्यवाहिओं को कम ज्यादा करते हैं। चिन्ताएं भय के माध्यम से इस आटोनामिक नर्वस सिस्टम में असन्तुलन पैदा करती हैं। इसके फलस्वरूप डायरिया से लेकर हार्ट अटैक तक की बीमारियां हो सकती हैं। उदाहरण के रूप में इम्तहान के समय कई विद्यार्थियों को डायरिया हो जाता है। इसका कारण परीक्षा का डर है क्योंकि ऐसे समय पैरासिम्पैथेटिक प्रणाली ज्यादा कार्य करती है। इससे रक्तदाब में वृद्धि, हृदय का दर्द, हार्ट अटैक जैसी घातक बीमारियां भी हो सकती हैं।

तनाव का मस्तिष्क पर प्रभाव

चिन्ताओं का प्रभाव हमारे मस्तिष्क पर भी होता है। डा. रेविनर एवं वेश्यनर ने इस विषय में अनेक रोगियों का अध्ययन किया है जिन्हें आरम्भ में मानसिक रोग था एवं उनका उसी प्रकार से इलाज किया गया था। कुछ समय के बाद उनका फिर से परीक्षण करने के बाद यह बात सामने आई कि अब उनके मस्तिष्क में भी वही खराबी उत्पन्न हुई है। उन्होंने अपने विश्लेषण के बाद यह निर्णय लिया है कि मानसिक तनाव मस्तिष्क पर भी असर करता है।

तनाव से रोग प्रतिकारक शक्ति में कमी

जब वायु मंडल के कीटाणु व्यक्ति के शरीर पर प्रभाव डालते हैं तब शरीर की रोग प्रतिकारक शक्ति कीटाणुओं को मार डालती है। एवं अन्य विषैले पदार्थों के असर से शरीर को बचाती है। चिन्ताओं के कारण व्यक्ति की रोग प्रतिकारक शक्ति भी कम हो जाती है। तनाव में स्टीरोयड नामक हारमोन्स की मात्रा बढ़ जाती है। स्टीरोयड हारमोन्स में वृद्धि होने से रोग प्रतिकारक शक्ति कम हो जाती है। इस प्रकार चिन्ताएं चिता की तरह शरीर को नष्ट कर देती हैं।

तम्बाकू इलाज या जहर

तनाव एवं चिन्ताओं वाली मानसिक स्थिति वास्तव में किसी को भी पसन्द नहीं। सभी उससे मुक्ति पाने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन स्थाई रूप से तनाव-मुक्ति के उपाय की जानकारी न होने के कारण कोई न कोई अल्पकाल का मार्ग ढूंढने की कोशिश करते हैं। इसी कारण कई लोग धूम्रपान का भी सहारा लेते हैं।

तम्बाकू के धुएं में निकोटीन कार्बनमोनोआक्साइड, कोलथर अनेक विषैले तत्व हैं। धूम्रपान से पैदा होने वाली गर्मी के कारण जीभ एवं ओंठों पर कैंसर हो सकता है। वैज्ञानिक निरीक्षणों के दौरान धूम्रपान करने वालों में फेफड़ों का कैन्सर आम जनता की अपेक्षा बीस गुणा अधिक पाया गया है। लीवर, हृदय एवं मस्तिष्क के रोग भी धूम्रपान के कारण हो सकते हैं। जठर का अल्सर एवं कैन्सर भी धूम्रपान करने वालों में आमतौर से पाया गया है। धूम्रपान से होने वाले रोगों के प्रमाण इतने स्पष्ट हैं कि अमरीकन हार्ट एसोसियेशन, अमरीकन कैंसर सोसायटी और हमारी केन्द्र सरकार के स्वास्थ्य विभाग ने धूम्रपान को स्वास्थ्य के लिए घातक घोषित किया है।

आध्यात्मिक स्वास्थ्य सम्पूर्ण स्वास्थ्य का आधार

मानसिक तनाव से मुक्त होने का योग्य उपाय तनाव उत्पन्न करने वाली

परिस्थितियों के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना एवं तनाव का सामना करने के लिए मानसिक और शारीरिक शक्ति में वृद्धि करनाहै। आध्यात्मिक स्वास्थ्य का सही अर्थ में विकास करने से यह प्राप्तियां स्वाभाविक रूप से होती हैं। लेकिन आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति के लक्षण क्या हैं?

आध्यात्मिक स्वास्थ्य वाला व्यक्ति स्वयं को शरीर से भिन्न अजर अमर और अविनाशी अनुभव करता है। कर्म के दौरान भी वह आत्मा के स्वधर्म–शान्ति, प्रेम आनन्द एवं पवित्रता में स्थित रहता है। इसलिए वह तनाव एवं व्यसनों से युक्त रहता है।

सभी आत्माओं के पिता परमात्मा का सही परिचय होने के कारण वह दैहिक भेद-भाव से मुक्त रहकर सभी को आत्मा के नाते भाई-भाई समझता है। वह लोभ, रिश्वत, ईर्ष्या आदि से मुक्त रहकर आध्यात्मिक पुरुष के अनुरूप कर्म करता है। योगाभ्यास द्वारा प्राप्त शक्ति से वह पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए आध्यात्मिक उन्नति का पुरुषार्थ करता है।

सम्पूर्ण स्वास्थ्य की कुंजी सहज राजयोग

सहज राजयोग के अभ्यास से मन शान्त व शक्तिशाली बनता है। मन की स्थिति का प्रभाव शरीर पर पड़ता है। न्यूयार्क, मेलबार्न, सानफ्रांसिसकों आदि स्थानों पर राजयोगियों पर किए गए परीक्षणों से यह बात सामने आई है कि उनके मस्तिष्क की तरंगें गहरी शान्ति की स्थिति वाली होती हैं। न केवल योगाभ्यास के दौरान लेकिन मानसिक कार्य करते समय भी उनमें डेल्टा तरंगे गहरी पाई गईं। सामान्य व्यक्तियों में डेल्टा तरंगें गहरी नींद में पाई जाती हैं, वैज्ञानिक भी बौद्धिक कार्य करते समय मन की इतनी स्थिर एवं शान्त स्थिति से प्रभावित हुए हैं।

इसके अलावा योगाभ्यास से रक्त में लैक्टिक एसिड का प्रभाव भी काफी मात्रा में कम हो जाता है। मानसिक तनाव की स्थिति में लैक्टिक एसिड बढ़ता है इसीलिए लैक्टिक एसिड का कम होना मानसिक शान्ति की प्राप्ति का प्रतीक है। योगाभ्यास से हृदय वाहिका प्रणाली, श्वसन प्रणाली आदि की कार्यवाही में भी सुव्यवस्था आती है।

आध्यात्मिक सत्य का वैज्ञानिक आधार

सहज राजयोग के अभ्यास के लिए सबसे पहले यह जानने की आवश्यकता है कि मैं कौन हूं? स्व को शरीर या मस्तिष्क मानना एक भूल है। मस्तिष्क-विज्ञान में पिछले बीस वर्षों में की गई प्रगति के दौरान ऐसे अनेक प्रमाण सामने आए हैं, जिसके फलस्वरूप कई वैज्ञानिक भी मस्तिष्क से भिन्न एक चैतन्य के अस्तित्व को मानने लगे हैं। वास्तव में मैं एक सूक्ष्म चैतन्य शक्ति आत्मा हूं जो पांच तत्वों के शरीर को धारण कर इस विशाल सृष्टि रूपी रंग मंच पर अपना अभिनय करती हूं। आत्मा, शरीर रूपी रथ को संचालन करने वाली रथी है। आत्मिक स्मृति में स्थित होकर आत्मानुभूति भ्रकुटि के मध्य में की जाती है। जैसे ध्वनि, विद्युत, चुम्बक आदि भौतिक शक्तियों को चर्म चक्षुओं से देखा नहीं जा सकता है पर कर्म -इन्द्रियों के द्वारा उनका अनुभव किया जा सकता है, उसी प्रकार अति सूक्षम दिव्य शक्ति आत्मा को हम देख नहीं सकते लेकिन योगाभ्यास के माध्यम से उनका अनुभव कर सकते हैं। आत्मा मन, बुद्धि एवं संस्कारों सहित है। मन का कार्य है विचार करना, बुद्धि के निर्णय के अनुरूप शरीर द्वारा कर्म होता है। व्यक्ति जैसा कर्म करता है। वैसे उसके संस्कार बनते हैं और संस्कारों का असर मन एवं बुद्धि पर भी पड़ता है।

डा. पी. आर. वर्मा

¤

पुरी सेवाकेन्द्र पर पधारने पर डा० के० सी० उपाध्याय, डायरेक्टर ईण्डियन मेडिसिन्स उडीसा को ईश्वरीय सौगात देती हुई ब्र० कु० निरुपमा बहन

एक अनूठा अनुभव

चण्डीगढ़ सेवाकेन्द्र पर शिव जयन्ती के उपलक्ष्य में समय को सफल करने के बारे अपने बहिन भाईयों के लिए एक विशेष प्रोग्राम १०० घंटों के लिए योग की प्रयोगशाला' बनाया गया । ८.३.८९ को प्रातः ७ बजे से ११.३.८९ प्रातः ११ बजे तक । प्रत्येक राजयोगी भाई बहिन ने इस पीरियड में अपने ऊपर विशेष ध्यान रखने का दृढ़ संकल्प लिया । प्रातः ५ बजे से १ बजे तक और सायं ६ से ९ बजे तक । सेवाकेन्द्र पर सामूहिक ज्ञान योग भट्ठी रखी गई । सभी भाई बहिनें अधिक से अधिक समय इसमें देते रहे । इन १०० घण्टों में (रात्रि १० बजे से प्रातः ६ बजे को छोड़ कर) हरेक भाई बहिन एक घन्टे के बाद कुछ क्षणों के लिए अपनी स्थिति का चार्ट चैक करता था । उसमें भी मुख्य दो बातें फरिश्ता-स्वरूप की स्थिति कितनी रही तथा लाइट-माइट स्वरूप की स्थिति कितनी रही । इस दौरान सेवाकेन्द्र के वातावरण में एक अद्भुत परिवर्तन देखा गया । प्रत्येक भाई बहिन अपने परिवार एवं व्यवहार में रहते ईश्वरीय लगन में मगन अपनी वास्तिक स्थिति में स्थित अव्यक्त फरिश्ता दिखाई दिया, वाणी मधुर बहुत धीमी हो गई ।

रविवार, १२.३.८९ को सभी ने अपना विशेष अनुभव लिखा और इस दिव्य प्रोगाम के अनुभव अन्य आत्माओं तक पहुँचाने हेतु १२.३.८९ प्रातः ११ बजे से १२.४० तक १०० मिनटों का एक विशेष सार्वजनिक कार्यक्रम राजयोग भवन में रखा गया । विषय था — समय की परिभाषा तथा समय को सफल बनाने की विधि ।

कुछ समय पहले चण्डीगढ़ तथा इसके आसपास के ३४ सेवाकेन्द्रों, गीता पाठशालाओं के बहिन भाईयो को आठ ग्रुपों में बांटा गया है १.सहयोग दल २.एकता दल ३.प्रकाश दल ४. दिव्य दल ५.शक्ति दल ६.शान्ति दल ७.स्नेह दल ८.सेवा दल ।समय प्रति समय जो भी कार्यक्रम यहाँ रखे जाते हैं उनकी सारी ज़िम्मेवारी किसी न किसी ग्रुप पर रखी जाती है । यह देखने में आया है कि इससे प्रत्येक भाई बहिन की विशेषताओं का विकास होता है और उनमें कार्य करने की क्षमता बढ़ती है । ऊपर्लिखित सार्वजनिक प्रोग्राम में प्रत्येक दल को ८-८ मिनट का समय दिया गया । वह दृश्य बहुत ही विचित्र लगता था । हरेक ग्रुप की ओर से भाई बहिनें मंच पर आते और 'समय को सफल कैसे किया जाए' इस विषय पर, अनुभव, विचार, गीत या लघु नाटक प्रस्तुत करते । यह १०० मिनट का प्रोग्राम भी अनेक आत्माओं पर अमिट छाप छोड़ गया ।

लगभग सभी का यही विचार रहा कि हम मास्टर नालेजफुल तो बन गए हैं, ज्ञान का कोई ऐसा बिन्दु नहीं जो स्पष्ट न हो । समय के महत्त्व को भी जानते, परन्तु जितनी बात मस्तिष्क में है उतनी व्यवहार में नहीं । कारण —अटेन्शन और चेकिंग की कमी है । युक्तियां अनेक जानते और दूसरों को भी सुनाते परन्तु उनका दिव्य प्रयोग अपने कार्य और व्यवहार में पूरा नहीं करते। अटेन्शन की चाबी सदा स्मृति में रहने से हम अपने पुरुषार्थ से स्वयं सन्तुष्ट रह सकते, अन्य को भी सन्तुष्ट रख सकते तथा प्यारे बाबा के श्रेष्ठ संकल्पों को साक़ार रूप दे सकते हैं । ऐसे संगठित प्रोग्राम बनाने से धीमी गति से चलने वाले अथवा अलबेला-पन या आलस्य के अधीन भाई बहिनों के पुरुषार्थ में अनूठा परिवर्तन आता है ।

ब्र० कु० अमीर चन्द, चण्डीगढ़

प्रश्नोत्तर

महसूसता से होगा परिवर्तन

प्रश्न - 'महसूसता की शक्ति' महान शक्ति है परन्तु महसूस करने के बाद भी हम परिवर्तन नहीं कर सकते हैं। तो मन बहुत ही निराश होता है, तो महसूसता के बाद परिवर्तन कैसे करें?

उत्तर - अपनी कमियों को महसूस करना भी श्रेष्ठ पुरुषार्थी का चिन्ह है। परनतु जो पुरुषार्थी अपनी कमजोरियों को भी न जानता हो वह तो ढईला पुरुषार्थी ही है। परन्तु ऐसी योगी ही सर्व श्रेष्ठ है, जो महसूस करके परिवर्तन कर दे।

महसूसता की शक्ति उनकी ही बढ़ती है जिन्हें सदा स्वपरिवर्तन की चिन्ता है। जो एकान्त में चिन्तन करते हैं तथा अन्तर्मुखता के द्वारा अपनी शक्तियां जमा करते हैं।

'महसूसता' दो तरह की हैं। एक अपनी कमियों की महसूसता दूसरी अपनी महानता की या स्वमान की महसूसता। अपनी कमियों की महसूसता भी अनेक पुरुषार्थियों को है, परन्तु अपनी महानताओं की महसूसता काफी कम है। इसी कारण परिवर्तन नहीं हो पाता। अपने श्रेष्ठ स्वमान की स्मृति से ही परिवर्तन-शक्ति आती है।

मान लो किसी व्यक्ति को बार-बार क्रोध आता है, वह इसे महसूस भी करता है कि इससे कितने नुकसान होते हैं, परन्तु वह क्रोध पर विजयी नहीं हो पाता। अब ज्ञान से उसे मालूम होता है कि तुम ही तो वे देवी-देवता हो, जिनका मन्दिरों में कीर्तन हो रहा है, जिनके दर्शन से ही भक्तों के चित्त शीतल हो रहे हैं। इतने महान हो तुम! और उसे अपने स्वमान की स्मृति आ जाती है। अब उसका चिन्तन होगा...मैं तो देवता था, इतना महान!...क्रोध तो माया की देन है। मुझे तो अब माया को जीतकर देवत्व को पाना है। कहीं मेरे भक्त मुझे क्रोध करता देख लें तो...देवता तो सबको वरदान देते हैं। मैं क्रोधवश होकर किसी को श्राप क्यों दूं?...यह तो मुझ पर मायावी प्रभाव है।.....आदि-आदि।

इस प्रकार स्वमान की स्मृति उसे स्वचिन्तन की ओर ले चलेगी और धीरे-धीरे उसका क्रोध शान्त हो जायेगा।

तो हमें स्वमान की उन बातों पर बार-बार चिन्तन करना चाहिए जो कि त्रिकालदर्शी न हमें याद दिलाई हैं। उदाहरणार्थ....

तुम बच्चे, प्रकृति के मालिक हो। यह

ब्र० कु० सूर्य, माउण्ट आबू

देह प्रकृतिकृत है। यह तुम्हारे अधीन हो। तुम इसके अधीन नहीं हो सकते, तुम इसके आकर्षण में नहीं आ सकते।

तुम आत्मायें विश्व की सभी आत्माओं के पूज्य व पूर्वज हो। तुम पर विश्व परिवर्तन की जिम्मेदारी है।

तुम बच्चे पुण्यात्मा, धर्मात्मा व सबसे महान आत्मा हो इसलिए तुम्हारा एक-एक बोल महसूस हो।

इस प्रकार महसूस करने से परिवर्तन की शक्ति बढ़ेगी। इसी तरह 'महसूसता की शक्ति' का प्रयोग स्वयं को एक-रस रखने में भी किया जा सकता है। मान लो कोई व्यक्ति हम पर क्रोध कर रहा है तो हमें यह महसूसता हो कि यह बेचारा अब माया-वश है या परिस्थिति-वश है। यह महसूसता हमें रहम दिल बनायेगी और हम अडोलता में रह सकेंगे तथा हमें क्रोध भी नहीं आयेगा।

प्रश्न - हम ईश्वरीय महावाक्यों में सुनते हैं कि बाप समान बनने के लिए विशाल-दिल व विशाल-बुद्धि बनो। इसका स्पष्टीकरण करें।

उत्तर - बुद्धि के कई भेद किये जा सकते हैं, जैसे पवइत्र बुद्धि या दिव्य बुद्धि, महीन बुद्धि या सूक्ष्म बुद्धि, बेहद की बुद्धि या विशाल बुद्धि, दूरान्देशी बुद्धि, स्वच्छ बुद्धि व तीव्र बुद्धि। इसके विपरीत मन्द बुद्धि या मोटी बुद्धि भी होती है।

इसी तरह रहम दिल, विशाल दिल, उदार दिल, कोमल दिल और मजबूत दिल - ये दिल के भेद हैं। विपरीत दिशा में कठोर दिल या बुज दिल का वर्णन भी किया जा सकता है।

विशाल बुद्धि व विशाल दिल में काफी सामीप्य है। जहां बुद्धि विशाल है, वाहं दिल सहज ही विशाल व उदार बन जाता है।

विशाल बुद्धि क्या है?

वह बुद्धि जिसमें छोटे विचार न हों, बेहद के विचार हों। जिसमें स्वार्थ भरा न हो। जो सदा विश्व-कल्याण की बातें ही सोचती हो, जो छोटी छोटी बातों में विचलित न हो।

इसी प्रकार विशाल दिल अर्थात् महादानी। जो अपना भी सर्वस्व दान कर देते हों, जो किसी भी बात की परवाह न करते हों, जो सभी की मनोकामनाएं पूर्ण करते हों, जो छोटी-छोटी बातों की चिन्ता न करते हों।

सम्पूर्णता के पथ पर बुद्धि का सर्वाधिक महत्व है। पढ़ाई का आधार बुद्धि ही होती है। विशाल बुद्धि न होने से मनुष्य अवगुण ही देखता हैं, उसमें अहं भाव भी समाया रहता है। फलस्वरूप ये आनन्द-कारी कटीली राहें बन जाती हैं।

बाप-समान सम्पूर्ण बनने वाले, बाबा के 'नथिंग न्यू' (Nothing New) के मंत्र के अनुभवी हैं। यह उनकी विशालता का प्रमुख चिन्ह था। बड़ी से बड़ी घटना को भी 'नथिंग न्यू' कहकर वे हल्का कर देते थे। इस तरह पहाड़ को राई बनाना-यह है विशाल बुद्धि का लक्षण। जबकि छोटी बुद्धि वाले प्रत्येक छोटी बात को समस्या बना देते हैं।

'विशाल बुद्धि व विशाल दिल'- राजाई प्राप्त करने वालों के चिन्ह हैं। राजा उदार होते हैं, विशाल बुद्धि से ही उन्हें यथार्थ निर्णय लेने होते हैं। यदि उनकी बुद्धि छोटी हो तो वे छोटी-छोटी बातों में उत्तेजित होकर, गलत निर्णय लेकर सारी राज्य व्यवस्था को ही नष्ट कर देंगे। हमारी भी जन्म-जन्म विश्व पर राज्य करने की ट्रेनिंग हो रही है। स्वयं भगवान हमारा ट्रेनिंग टीचर है। तो हमें विशाल बुद्धि होना चाहिए।

विशाल बुद्धि के कारण बाबा की सेवाओं की योजनाओं में भी विशालता देखने में आती थी। वे कहते थे 'बच्चे बड़े दिल से प्रोग्राम करो। दाता तुम्हारे भण्डारे अवश्य ही भरपूर करेगा।' बैगरी पार्ट में भी सब ने बाबा को सदा ही उदार दिल देखा।

इस प्रकार विशाल बुद्धि बनाने के लिए विशाल दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। संक्षेप में यों कह सकते हैं कि स्वचिन्तन व मनन से बुद्धि विशाल होने लगती है। दूसरों को सुख देने की भावना, सबको सहयोग देने की भावना व आगे बढ़ाने की भावना से दिल विशाल होने लगता है। अर्थात् महान विचारों से ही दोनों शक्तियां महान बनती हैं।

प्रश्न - पुरुषार्थ को सरल कैसे करें। व्यापार में रहते हुए चार्ट लिखना तो कठिन होता है। परन्तु श्रेष्ठ पुरुषार्थी बनने की तीव्र इच्छा है। कोई सरल सुझाव चाहिए।

उत्तर - विनाशी धन के व्यापार में इतने व्यस्त कि भगवान से सच्चा व्यापार करने का भी समय न हो, कितनी बुद्धिमानी है!

खैर, यदि आप श्रेष्ठ स्थिति चाहते हैं तो पहली शर्त है कि आप अमृतवेले योग व क्लास न छोड़ें। इन दोनों का आनन्द आपके जीवन में अलौकिकता बनाये रखेगा। देर से उठना तो निराशा ही देगा। यदि आप कहें कि व्यस्तता के कारण आप देर से सोते हैं और जल्दी नहीं उठ सकते तो श्रेष्ठ स्थिति पाने का इरादा छोड़ दें। जो है उसी में सन्तुष्ट रहें।

अमृतवेले आत्म-सन्तोष के अनुभव से आपका व्यापार सरलता से चलेगा, आपकी कार्य क्षमता व बौद्धिक बल बढ़ेगा। मन भी शान्त रहेगा व धन भी सरलता से बढ़ेगा। प्रत्येक कार्य में सफलता आपका स्वागत करेगी।

हम कुछ बातें लिख रहे हैं, उनका अभ्यास करके देखो। हमें विश्वास है कि आपको लक्ष्य-प्राप्ति अवश्य होगी। पुरुषार्थ का आधार हमारी दृष्टि पर है। प्रतिदिन दृष्टि के लिए इस प्रकार अभ्यास करें-

आप सबको इस दृष्टि से देखें कि सभी महान आत्माएँ हैं। और जो भी दुकान पर आये, यह संकल्प करो कि स्वयं बाबा ही इन्हें मेरे पास भेज रहे हैं।

दूसरे दिन आप सभी को निर्दोष दृष्टि से ही देखें - ये सभी निर्दोष हैं। देखो यह दृष्टि आपको कैसा अनुभव कराती है।

तीसरे दिन आप यह याद रखें कि मेरे साथ गद्दी पर शिव-बाबा भी बैठे हैं।, मुझे निहार रहे हैं।

चौथे दिन आप यह सोचें 'मैं फरिश्ता हूं। शिव बाब ने मुझे यहां भेजा है। और इस धरा पर मूलरूप सभी फरिश्ते हैं।

पांचवे दन आप यह देखें कि ये खेल अब समाप्त होने को है। हमें घर चलना है।

इस प्रकार प्रतिदिन एक संकल्प रखने से पुरुषार्थ तीव्र हो जायेगा। साथ ही साथ आँख खुलते ही यह स्मृति लायें कि वतन से बाबा अपना हाथ मेरे सिर पर रख रहे हैं।

प्रश्न - योग-अभ्यास के समय मुझे पूर्व समय की स्मृतियां ताजी हो जाती हैं। मेरे पाप-युक्त जीवन व विकारी जीवन की यादें मेरी खुशी को नष्ट कर देती हैं। मन सोच सोच कर भारी हो जाता है, इसलिए योग में एकाग्रता नहीं होती। क्या करूँ?

उत्तर - ज्ञान-प्राप्ति के पूर्व जो कुछ भी आपने किया, वह अज्ञानवश किया, परवश हो कर किया। इसलिए उसे अबोधता में खेला गया खेल समझ कर स्वयं को हल्का कर दो। यदि आप उसे भूलना चाहते हैं तो पहले उसे हल्का करना पड़ेगा। और हल्का कैसे होगा?

एक तो शिव बाब के सामने स्वयं को स्पष्ट कर दो। वह सबका बोझ हरने आया है, आपका बोझ भी हर लेगा। दूसरी बात - अपने चिन्तन को हल्का करो जो कुछ भी हुआ, अब तो वह नष्ट हो गया, अब तो मेरा कर्त्तव्य है कि योग-बल से उसे नष्ट करूं। यों ही मन भारी करने से तो पाप हल्का नहीं होगा, अब तो मैं प्रकाश में हूं, अतः अब मुझसे कोई विकर्म भी नहीं होगा - यह प्रतिज्ञा करो। जबकि भगवान स्वयं कह रहा है कि बीते को भूलो तो मैं याद क्यों करूँ।

यदि बीते दृश्य मानस-पटल पर उभरते हैं तो आप ऐसा अभ्यास करो - जैसे आजकल फिल्मों में किसी दृश्य को लोप

किया जाता है, वैसे ही वह दृश्य सामने आते ही तुरन्त सोचो कि वह दृश्य लोप हो रहा है और उसके स्थान पर ज्योति स्वरूप आत्मा प्रकट हो रही है। इस प्रकार मनुष्यों के दृश्य को आत्मा के दृश्य में बदलने का अभ्यास करो। इससे वे दृश्य धीरे धीरे सदा के लिए ही लोप हो जायेंगे।

अब तो हमारा ये नया जन्म है, उस जीवन से तो हम मर चुके हैं। अब उसे याद क्यों करें।

इसके अतिरिक्त पिछले दृश्यों को भुलाने के लिए वर्तमान के प्रभु-मिलन के दृश्यों को और भविष्य के स्वर्ग के दृश्यों को बार बार बुद्धि-चक्षु से सम्मुख लाओ। अपने वर्तमान ईश-मिलन को बार बार साकार करो, मानो आप पुनः अव्यक्त बाप-दाद से साकार में मिल रहे हैं। भविष्य के दिव्य स्वरूप करा चित्र प्रकट करके इस स्मृति में रहो कि ये है मेरा असली स्वरूप.....

प्रश्न- योग - निद्रा क्या है? इसके लिए किस पुरुषार्थ की आवश्यकता है, व इसके अनुभव क्या होते हैं?

उत्तर - ईश्वरीय महावाक्यों में हम योग-निद्रा का वर्णन सुनते हैं। इसका अर्थ है कि हमारी नींद भी योग-युक्त हो। सोते हुए भी हम परम आनन्द का अनुभव कर रहे हों। सोते हुए भी हमारा श्रेष्ठ स्वमान का स्वरूप हो। यदि कोई हमें सोते हुए देखे तो उसे ऐसा लगे कि कोई योगी समाधिस्थ है, कोई फरिश्ता विश्राम कर रहा है। सभी अँगों में अलौकिकता हो, शीतलता हो। ऐसी नींद ही सतोप्रधान नींद कहलाती है। ऐसी नींद या तो स्वप्न-रहित होती है या अलौकिक सपनों से युक्त। ऐसी नींद से जगने पर सुस्ती, भारीपन या नींद का प्रभाव नजर नहीं आता। जब वे उठते हैं तो ऐसा ही लगता है मानो योग-अभ्यास से उठे हों।

ब्रह्मा बाबा व ममा का का नींद का समय भी योग में ही गिना जाता है। क्योंकि वे जब सोचते थे तो भी योग-युक्त और जब जगते थे तो भी योग-युक्त और सारे दिन भी युग-युक्त। इसलिए ही उन्हें निरन्तर योगी कहा जाता है। ऐसी योग-युक्त निद्रा थोड़े समय में ही शरीर को पूर्ण विश्राम दे देती है।

परन्तु ऐसा निरन्तर योगी वही हो सकता है जिसे इस कलियुगी संसार का न तो कुछ देखने की इच्छा हो और न कुछ सुनने की। जिन्हें यहां कुछ भी सांसारिक प्राप्ति की तमन्ना न हो। दुनिया का कोई भी आकर्षण न हो। अर्थात् वैराग्य, जीवन में पूर्णतया समा चुका हो।

इस तरह जब सारा दिन योग-योक्त रहने की धुन होगी तो दिनचर्या में न तो बुरा बोलेंगे, न व्यर्थ सुनेंगे और न ही कोई विकर्म होगा। तब सोते समय यही अनुभव होगा, मानो कि प्रकाश के पुंज में विश्राम कर रहे हैं और आँख खुलते ही स्वयं को सर्वशक्तिवान की छत्र-छाया में पायेंगे।

प्रश्न - मेरे जीवन में चलते चलते बहुत अलबेलापन आ गया है। इसका निदान मैं कैसे करूँ?

उत्तर - जिन्हें भगवान ने विश्व को बदलने का कार्य सौंपा हो, जिन्हें समस्त धरा पर नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना हो, जिन्हें स्वयं को विकर्मों से मुक्त करके सर्वोच्च लक्ष्य को पाना हो, क्या वे अलबेलेपन की नींद सो सकते हैं? यह विकार तो उनमें ही प्रवेश करते हैं जो अपनी जिम्मेदारियों को भूल जाते हैं। जो ये भूल जाते हैं कि उन्हें तो स्वयं भगवान बाप की भी इच्छाओं को पूर्ण करना है।

तो जरा अन्तमुर्खी होकर अपनी जिम्मेदारियों का एहसास करो। स्वयं भगवान वतन में तुम्हारा इन्तजार कर रहा है। **वह और उसका कार्य तुम्हारे कारण रुका** हुआ है क्योंकि तुम अभी तैयार नहीं हुए हो-सोचो, तुम क्या कर रहे हो?

अनेक भटकती आत्माएं, वे आत्माएं जो अन्तरिक्ष में भटक कर दुख भोग रही हैं, तुम्हारे शक्तिशाली वाइब्रेशन्स की इन्तजार कर रही हैं। तुम्हें ही उन्हें मुक्ति देनी है। तो हे मुक्ति दाता, तुम अलबेलेपन से भी मुक्त नहीं हो?

स्वयं प्रकृति अपने पावन मालिकों के गले में माला डालने के लिए रुकी है। सेवाएँ देने के लिए उत्सुक है और आप अलबेलेपन की चादर ताने हुए हों!

अनेक भक्त तुम्हारे स्वरूप का दर्शन करने के लिए लालायित हैं। तुम्हें उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण करनी हैं। तो क्या भक्तों की आवाज सुनने वाले अलबेले हो सकते हैं?

अलीगढ़ सेवाकेन्द्र की ओर से एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। इस प्रदर्शनी को देखने के पश्चात् डा. पाहवा जी को ब्र० कु० शीला बहन श्रीकृष्ण का चित्र भेंट कर रही हैं।

अलबेलापन भाग्य विधाता से भाग्य लेने से वंचित कर देता है

बहुत समय के बाद मेरे पड़ौसी राम स्वरूप भाई से मेरी मुलाकात हुई, तब तक मैं प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के सम्पर्क में आने के कारण ईश्वरीय ज्ञान द्वारा अपने जीवन को पूर्णतः लौकिक से अलौकिक बना चुका था अर्थात् धूम्रपान, मद्यपान को छोड़ दिव्य गुणों की धारणा और राजयोग का अभ्यास करता था । राजयोग के अभ्यास से अतीन्द्रिय सुख, शान्ति, आनन्द की प्राप्ति होने के कारण अन्दर में यही प्रबल इच्छा रहती कि इस इश्वरीय प्राप्ति के बिना कोई भी आत्मा वंचित न रह जाये। जब मेरी मुलाकात राम स्वरूप भाई से हुई तो मैंने उसको ईश्वरीय सन्देश सुनाया कि सर्व आत्माओं के पिता, सर्व आत्माओं भाग्य विधाता निराकार परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा भाग्य बांट रहे हैं। रामस्वरूप पुलिस में सर्विस करता था जो कुछ ही दिन की छुट्टी आया था। ईश्वरीय सन्देश सुनते ही राम स्वरूप अत्यन्त खुश हुआ। परन्तु जीवन में थोड़ा अलबेलापन होने के कारण कहने लगा "बस थोड़े दिनों में मेरी तरक्की हो जायेगी, मैं थानेदार बन जाऊंगा और मेरे भतीजे की शादी भी है वह कार्य भी समाप्त हो जायेगा, बस फिर मैं ईश्वरीय ज्ञान का पूर्ण आनंद लूंगा।"

राम स्वरूप की छुट्टी पूरी हो गई वह अपनी ड्यूटी पर चला गया। कुछ ही दिन के बाद घर में भतीजे की शादी की तिथि आ गई। गांव में बिजली न होने के कारण शादी पर शहर से जनरेटर मंगवाया गया। खूब लाईट लगा कर सजावट की गई। बरात जाने का समय होने वाला था। सभी को रामस्वरूप की इन्तजार थी। बस वह पहुंचे और बरात चल पड़े। शादी में खूब चहल पहल थी, सभी विनाशी खुशी में मस्त थे। मैं भी ईश्वरीय नशे में आपार खुशी में था कि रामस्वरूप इस कार्य के बाद ईश्वरीय प्राप्ति में व भाग्य-विधाता से अपना भाग्य लेने का अधिकारी बनेगा। तब तक पुलिस की जीप आकर दरवाजे पर रुकी। बरात जाने का समय हो चुका था। जीप को देखते सभी की खुशियां एड़ी से चोटी तक नजर आ रही थीं। लेकिन नर चाहत कुछ और है और की और भई । जैसे ही जीप से उतर कर एक पुलिस वाले ने जीप का पिछला दरवाजा खोला तो रामस्वरूप की लाश बर्फ

ब्र० कु० जगरूप,कृष्णानगर, दिल्ली

के ढेर पर रखी हुई थी क्योंकि तरक्की के कोर्स में राम स्वरूप की श्वास अचानक रुक गई थी। आपार खुशियों का दृश्य आपार गमियों में बदल गया। दृश्य को देखते मुझे ईश्वरीय महावाक्य याद आये- मीठे बच्चे, अलबेला पन भाग्य-विधाता से भाग्य लेने का भी समय नहीं देता, मीठे बच्चे, अभी नहीं तो कभी नहीं, मीठे बच्चे, कल का नाम काल है, मीठे बच्चे, संगम युग की ईश्वरीय मिलन की घड़ियां बीतती जा रही हैं।

इस प्रकार की अनेक घटनाएं हमें शिक्षा देती हैं कि जैसे पांच विकार आत्मा के शत्रु हैं ऐसे ही यह छठा विकार है अलबेलापन व आलस्य व सुस्ती जो जीवन में ईश्वरीय मिलन से वंचित कर देता है, अमुल्य जीवन को हीरे जैसा बनाने में विघ्न रूप बन जाता है। भगवान की प्राप्ति होने के बाद, मास्टर त्रिलोकीनाथ, त्रिकालदर्शी, त्रिनेत्री बनने के बाद भी यह विकार सर्वश्रेष्ठ भाग्य से व सर्वश्रेष्ठ प्राप्ति से वंचित कर देता है। अलबेलापन ईश्वरीय प्राप्ति से तो वंचित करता ही है परन्तु कई दफा प्राप्ति से वँचित होने के लिए पश्चाताप करने का समय भी नहीं देता ।इसी संदर्भ में मुझे एक घटना याद आ रही है— जब मैं मिलट्री में सर्विस करता था। वर्ष १९६९ में जब हिन्दुस्तान पाकिस्तान का युद्ध चल रहा था। मेरे साथ मेरा दोस्त जो ईश्वरीय ज्ञान को बहुत ध्यान पूर्वक सुनता और कहता था जगरूप भाई बस यह लड़ाई समाप्त होते ही मैं खूब राजयोग का अभ्यास करूंगा। लड़ाई के समय एक दिन शाम को करीब चार पांच बजे पाकिस्तान के जहाजों ने हम पर हमला किया। मैं तो वहीं लेट गया और मेरा दोस्त भाग कर दो कदम दूर एक गड्ढे में छुप गया । हम हवाई जहाज के हमले से बच गये परन्तु मैंने देखा कि मेरा साथी गड्ढे से बाहर नहीं आया। मैंने तुरन्त जाकर साथी को देखा कि एक भयंकर काला सांप जो उसकी गर्दन पर अपना फन फैलाये खड़ा था और मेरा साथी नीचे मुंह करके मौत की गोद में सदा के लिए सो रहा था । मुझे फिर ईश्वरीय महावाक्य याद आये — मीठे बच्चे, तीव्र पुरुषार्थी वह जो अलबेलापन व आलस्य का सम्पूर्ण त्याग कर ईश्वरीय पढ़ाई के चारों ही विषयों (ज्ञान, योग, धारणा, सेवा) में लग जाये।

वास्तव में अलबेलापन ज्ञान मार्ग पर चलने वाली आत्मा के लिए दीमक के कीड़े की तरह कार्य करता है जो धीरे-धीरे आत्मा को अंदर से खोखला अर्थात् ईश्वरीय

शक्तियों को नष्ट करता है। आत्मिक सुखों से दूर कर भौतिक व अल्प सुखों की तरफ आकर्षित करता है, साधना से दूर साधन-स्वरूप बना देता है। इसलिए राजयोग के पथ पर चलने वाली राजयोगी आत्माएं, "आओ हम इस अलबेलेपन की नींद को त्याग समस्त विश्व की आत्माएं जो इस अलबेलेपन के कारण ईश्वरीय मिलन से वंचित हैं उनको भी अपने त्यागी और तपस्वी जीवन के उदाहरण से भाग्य-विधाता से भाग्य दिलाने के निमित्त बनें"।

इंसान बनो, ईश की सन्तान बनो

जलचर बनो या न बनो, नभचर बनो या न बनो,
कुछ और बनो, न बनो, इंसान बनो-
इंसान बनो, ईश की सन्तान बनो.....

मानव को सुख-सुविधा से भरपूर बनाने वाले,
उड़ने लगे गगन में अब धरती पर चलने वाले।
वर्तमान के निर्माता, विज्ञान के हे वरदाता।
धन्यवाद, तुमको है हे भौतिक सुख के दाता।
किन्तु परम ज्ञान के ज्ञानवान बनो-
इन्सान बनो, ईश की सन्तान बनो.....

नभ में उड़ने वाले, सीखो; चलना इंसानों के साथ
चिड़ियां कितनी उड़ें आकाश, चारा है धरती के पास
बिना मूल के अगर वृक्ष की चोटी पर चढ़ जाओगे-
निश्चय कुछ न पाओगे, गिरकर के जान गंवाओगे।
निर्माण करो न करो, निर्मान बनो-
इंसान बनो, ईश की सन्तान बनो.....

एटम बम के निर्माताओ, करते क्या हो कुछ है ध्यान?
अपनी जान बचा कर लेना चाह रहे औरों की जान
यह भी कैसा ज्ञान जिसे कहते आये हो तुम विज्ञान?
ऐ नादान, नहीं कल्याण, महाप्रलय का तांडव मान।
उत्थान करो न करो, महान् बनो-
इंसान बनो, ईश की सन्तान बनो.....

नहीं अवज्ञा करो ईश की, बनकर के उनकी सन्तान,
करो कलंकित दूध नहीं जगती मां का तुम करके पान।
वक्त बहुत नाजुक है इससे न होना बिल्कुल अन्जान,
आत्म ज्ञान-परमात्म ज्ञान की, कुछ तो अब कर लो पहचान।
बुद्धिवान बनो न बनो, चरित्रवान बनो,
इन्सान बनो, ईश की सन्तान बनो।

सतीश कुमार
माऊंट आबू

मेहसाना : राधनपुर उप-सेवा केन्द्र में व्यापारियों के स्नेह-मिलन में तालुका पंचायत के प्रमुख भ्राता करमाणा भाई पटेल, डा. हरीश शुक्ल, ब्र० कु० सरला, प्रमिला आदि दिखाई दे रही हैं।

-"जीवन को मानवीय बनाने का केन्द्र"-
"दिव्य जीवन कन्या छात्रावास", इन्दौर

जीवन के समस्त गुणों, एश्वर्यों समृद्धियों और वैभवों की आधारशिला है सच्चरित्रता। सच्चरित्र बनने के लिए मनुष्य को सुशिक्षा, सत्संगति और स्वानुभव की आवश्यकता होती है। वैसे तो अशिक्षित व्यक्ति भी संगति और अनुभव के आधार पर अच्छे चरित्र के देखे जाते हैं। परन्तु बुद्धि का परिष्कार और विकास बिना शिक्षा के नहीं होता। मनुष्य को अच्छे और बुरे की पहचान ज्ञान और शिक्षा के द्वारा ही होती है। शिक्षा से मनुष्य की बुद्धि के कपाट खुल जाते हैं। अतः सच्चरित्र बनने के लिए अच्छी शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है। अच्छी शिक्षा के साथ-साथ मनुष्य को सत्संगति भी प्राप्त होनी चाहिए। देखा गया है कि शिक्षित व्यक्ति भी बड़े-बड़े कुमार्गगामी और दुराचारी होते हैं। इसका केवल यह एक कारण है कि उन्हें अच्छी संगति प्राप्त नहीं हो सकी, बुरी संगत के प्रभाव से शिक्षा दीक्षा का प्रभाव भी समाप्त हो जाता है।

सच्चरित्र से मनुष्य को बहुत लाभ मिलता है। इससे व्यक्ति की समाज में प्रतिष्ठा होती है, उसे आदर सम्मान का स्थान प्राप्त होता है। चरित्रवान व्यक्ति ही अपनी आत्मा को सुसंस्कारी बना पाता है उसके विभिन्न विचार, उसकी महान भावनाएं, उसके दृढ़ संकल्प सम्पूर्ण वायुमण्डल में विचरण करते हैं। इससे मनुष्य को सुन्दर, स्वस्थ्य और परिष्कृत बुद्धि प्राप्त होती है। जिसके द्वारा वह कठिन से कठिन कार्यों को सरलता से पूर्ण कर लेता है। अतः सच्चरित्र व्यक्ति इस लोक में तो कीर्ति का पात्र बनता ही है परन्तु अंत में स्वर्ग को भी प्राप्त करता है।

अतएव यह स्पष्ट है कि सच्चरित्रता के लिए शिक्षा, सत्संग स्वानुभव एंव दिव्य गुणों (पवित्रता, सहनशीलता, धैर्यता, अर्न्तमुखता) की परम आवश्यकता है। लेकिन वर्तमान समय की शिक्षा प्रणाली में तो ये सब बातें अति दुर्लभ हो गई हैं। इसलिए इन सारी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ही सन् १९८२ में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के इन्दौर स्थित ज़ोनल आफिस "ओमशांति भवन" के पास ही में "दिव्य

ब्रह्माकुमारी करुणा

जीवन कन्या छात्रावास" का शुभारम्भ किया गया है यहां समस्त कन्याएं अपने स्कूल कालेज की शिक्षा के साथ-साथ ईश्वरीय ज्ञान अर्जन करती हुई अपने जीवन को दिव्य बनाने का पूरा प्रयास करती हैं।

इस छात्रावास की वार्षिक गतिविधियां कुछ इस प्रकार रहीं:-

क्रीडा गतिविधिः- शिक्षा के अन्तर्गत अनुशासन एवं मैत्री भावना का विकास खेल की गतिविधियों पर आधारित है इसलिए होस्टल की कन्याओं ने सम्भागीय स्तर पर होने वाली खेलकूद प्रतियोगिताओं में भाग लेकर अपना उत्कृष्ट प्रदर्शन कर विजय को हासिल किया।

साहित्यिक गतिविधि- साहित्य एवं संस्कृति किसी भी देश की सभ्यता का द्योतक है। इसी तारतम्य में नेहरू जन्म शताब्दी समारोह के अन्तर्गत वाद-विवाद, भाषण, निबन्ध, सामान्य ज्ञान आदि कार्यक्रमों में कन्याओं ने भाग लिया।

सांस्कृतिक गतिविधियां-सांस्कृतिक कार्यक्रम किसी भी राष्ट्र की परम्पराओं, लोक संस्कृति एवं विभिन्न कलाओं को प्रस्तुत करने का माध्यम है, अतएव कन्याओं ने अपना-अपना शालाओं में होने वाले वार्षिकोत्सव में एकल नृत्य, सामूहिक नृत्य एवं संगीत, कला में भी भाग लिया।

विज्ञान गतिविधिः- वैज्ञानिक गतिविधि ही राष्ट्र की प्रगति एवं समृद्धि की द्योतक है। कन्याओं ने शहर में लगे "विज्ञान मेले" में भाग लेकर सफलता प्राप्त की।

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी होस्टल में "पालक दिवस" का कार्यक्रम विशेष रूप से मनाया गया जिसके अन्तर्गत कन्याओं के अभिभावकों एवं शहर के अन्य भाई-बहिनों को भी आमन्त्रित किया गया। इस अवसर पर भरत-नाट्यम, कत्थक, राजस्थानी नृत्यों के साथ-साथ नृत्य नाटिका, मुहावरेदार नाटक, मोनोएक्टिंग आदि-आदि कार्यक्रम कन्याओं के द्वारा प्रस्तुत किये गये। इस अवसर पर एक विशेष प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया जिसमें कन्याओं द्वारा की गई व कढ़ाई-बुनाई, चित्रकारी से युक्त सामग्रियाँ उपलब्ध थीं।

यह सारी उनके बाहरी विकास की

जानकारी हुई लेकिन उनके आन्तरिक विकास के लिये, आत्म-उन्नति के लिए प्रतिदिन ज्ञान, योग की शिक्षा दी जाती है। कन्याऐं स्वयं भी अपनी स्व-उन्नति के लिए आपस में विचार विमर्श भी करती हैं। इसके साथ ही महारथी भाई-बहिन (जो कि इस ज्ञान में श्रेष्ठ स्थिति को प्राप्त किये है) भी अपना अमूल्य समय देकर इनका ज्ञान रत्नों से श्रृंगार करते रहते हैं। इस प्रकार ईश्वरीय छत्र-छाया, सत्संग और महान श्रेष्ठ आत्माओं के उचित मार्ग दर्शन से समस्त कन्याऐं दिनोंदिन दिव्यता की ओर अग्रसर हो रही हैं।

इस छात्रावास में कक्षा ९ वीं (नोवीं) से लेकर कालेज में उच्च शिक्षा के लिए अध्ययनरत छात्राओं के रहने की सुविधा है। अधिक जानकारी के लिए आप सम्पर्क करें-

ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय
विश्वविद्यालय,
ओमशांति भवन,
३३/४, न्यू पलासिया,
इन्दौर

इन्दौर–'दिव्य-जीवन कन्या छात्रावास' की कन्याएं आस्ट्रेलियन फ़िल्म कलाकारों के साथ।

लूना गांव में शिवदर्शन प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए पादरा तालुका पंचायत के प्रमुख अंबुभाई पटेल और साथ में ब्र० कु० रसिक भाई तथा ब्र० कु० अम्बु बहन दिखाई दे रहे हैं।

पोईप (मालवण) में क्लास के उद्घाटन के पश्चात् चित्रों पर व्याख्या देती हुई ब्र. कु. पद्मा बहिन।

शुद्ध विचारों से होगा कलियुगी बेड़ा पार

कहावत भी है — सादा जीवन उच्च विचार। मनुष्य अपने रहन सहन को ऊँच बनाने मात्र से ऊँच नहीं बन सकता। जैसे ऊंचे स्थान पर बैठने से कौआ गरुड़ नहीं कहलाता। मनुष्य की श्रेष्ठता उनके वचारों से है। कहा भी गया है — महान व्यक्ति के बोल ही महान होते हैं। मनुष्य के श्रेष्ठ विचार उसकी विद्वता का प्रतीक हैं। भले ही वह देखने में साधारण हो परन्तु बोल अर्थात् वाणी अन्दर के विचारों को प्रगट करती है। अच्छे या बुरे मनुष्य की पहचान भी उनके बात करने के ढंग से होती है।

संसार में जितने भी लड़ाई झगड़े, अत्याचार, चोरी डकैती आदि हो रहे हैं - इन सबका कारण मनुष्यों के मस्तिष्क में पनप रहे अशुद्ध विचार रूपी कीड़े हैं जो मनुष्य की बुद्धि को अन्दर ही अन्दर खोखला करते जा रहे हैं और मनुष्य घायल शेर की तरह इधर उधर भटक रहा है, उसको अपना जीवन लक्ष्यहीन नजर आ रहा है, बिना मंजिल के राही की क्या दशा होगी- इसका आप अन्दाजा लगा ही सकते हैं। मनुष्य की सोचने-विचारने की शक्ति नष्ट हो चुकी है। इस कारण मन की अशुद्धता का परिणाम उसके कर्मों में, बोल में, आचार व्यवहार में दिखाई पड़ता है

कहा भी जाता है बुराई पहले मनुष्य के मन में उत्पन्न होती है

आज मनुष्य के बुरे कर्मों के दण्ड स्वरूप उसे जेल या फांसी दी जाती है लेकिन क्या इससे वह सुधर जायेंगे? नहीं। यदि ऐसा होता तो आज जेल की सजा खाने के बाद मनुष्य का जीवन सुधर जाना चाहिए। लेकिन हम देखते हैं कि जेल से निकले हुए मनुष्य में बुरी आदतें और भी पक्की हो जाती हैं और उसके लिए जेल मुफ्त की सराय बन जाती है।

शुद्ध विचार मन को ताजगी प्रदान करते हैं। जैसे शीतल जल में स्नान करने से शरीर में स्फूर्ती आती है वैसे शुद्ध विचारों का प्रवाह गंगा की शीतल जलधारा के समान है जो स्वयं को तो शीतल बनाती है साथ ही सम्पर्कमें आने वालों को भी शीतलता प्रदान करती है। अशुद्ध विचार उस बढ़ती हुई अग्नि के समान हैं जो मनुष्य के मन में उठती है और सम्पर्क में आने वालों पर भी अपना कुप्रभाव डालती है।

ब्र० कु० मीना, झालावाड़ राजस्थान

शुद्ध विचार मन को शक्ति प्रदान करते हैं। विचारों की शुद्धि से मनुष्य में रचनात्मक कार्य करने की क्षमता बढ़ती है, इससे समय और शक्ति की बचत होती है। स्वर्णिम विचार ही स्वर्णिम संसार लायेंगे। शुद्ध विचार बहती हुई गंगा के समान हैं जिससे सभी के जीवन में शुद्धता आती है। शुद्ध विचारों के तूफान विश्व में नया सुखद परिवर्तन लायेंगे। अशुद्ध विचारों के तूफान ने विश्व को विनाश के कगार पर खड़ा कर दिया है, शुद्ध विचार से मनुष्य के कर्म, बोल स्वतः ही श्रेष्ठ हो जाते हैं। तो विचारों को नया मोड़ देने के लिए चाहिए शुद्ध ज्ञान जो मानव की अन्तरात्मा में प्रकाश भर दे, मानव जीवन को सच्चे लक्ष्य की पहचान कराये। ज्ञान सागर परमपिता परमात्मा शिव ने ब्रह्मा तन का आधार लेकर बताया कि बच्चे तुम्हारा लक्ष्य है स्वर्णिम विचारों वाले श्रेष्ठ, मर्यादित, चरित्रवान मानव अर्थात् देवता बनना। स्वधर्म सबका शान्ति है, जब हम अपने स्वधर्म में थे तो शुद्ध, पवित्र और सम्पूर्ण सुखी थे। स्वधर्म को भूलने के कारण विचारों में अशुद्धि आई फिर आई दुखः अशान्ति।

जिस प्रकार बड़े-बड़े राष्ट्र अपनी अणु शक्ति को जमा करने में लगे हुए हैं इसके बदले यदि प्रत्येक राष्ट्र के नागरिक अपने शुद्ध संकल्पों को जमा करने में लग जायें तो शुद्ध संकल्पों की शान्तिमय दुनिया स्थापित हो जायेगी। शुद्ध ज्ञान वह संजीवनी बुटी है जो बूढ़ों में भी नयी उमंग उत्साह भर देती है अर्थात् जवान बना देती है, सत्य ज्ञान से मनुष्य में शेर जैसा साहस भर जाता है।

शुद्ध संकल्प आत्मा का अर्थात् मन का भोजन है। जैसे मरीज को उसकी बीमारी ठीक करने के लिए डाक्टर खाने पीने का परहेज बताता है इसी प्रकार विकारों से ग्रसित रोगी को रूहानी सर्जन परमात्मा ने अशुद्ध संकल्पों से परहेज रखने की सलाह दी है । इस परहेज को तब तक करें जब तक आत्मा सम्पूर्ण पावन न बन जाये, सम्पूर्ण पावन बनना ही सम्पूर्ण स्वास्थ्य का आधार है।

ककोड़ में लगाई गई प्रदर्शनी का उद्घाटन बुलन्दशहर के विधान सभा सदस्य श्री माता राजेन्द्र जी कर रहे हैं। साथ में ब्र० कु० बहिनें तथा अन्य अतिथिगण उपस्थित हैं।

सतयुग में हम श्री लक्ष्मी या श्री नारायण जैसा सुन्दर रूप कैसे प्राप्त करेंगे?

अब्राहम लिंकन से किसी ने अनुरोध किया कि अमुक आदमी से जाकर मिलें।

लिंकन ने कहा, "मैं उससे नहीं मिलना चाहता।"

"लेकिन आप उसे जानते भी तो नहीं हैं?"

"मुझे उसकी शकल पसन्द नहीं है।"

"आप किसी आदमी को उसके चेहरे के लिए कहां तक जिम्मेदार ठहरा सकते हैं?"

यह सुनकर राष्ट्रपति ने आग्रह के साथ कहा, "हर बालिग आदमी अपने चेहरे पर दिखने वाली शक्ल के लिए जरूर जिम्मेदार है।"

देह का निर्माता कौन?

हम विचार करें कि आखिर यह जो हड्डी मांस का शरीर है, उसका निर्माता कौन है? क्या परमात्मा, लौकिक मां बाप अथवा हम आत्मा स्वयं? इस विषय में हम तर्क द्वारा स्पष्ट जानते हैं कि हमारे शरीर को परमात्मा ने नहीं बनाया क्योंकि यह देह तो स्थूल है और इसे बनाने के लिए स्थूल देहधारी ही चाहिए। तो जब कि हम जानते हैं। शिव बाब तो बिन्दु रूप ज्योतिस्वरूप हैं। उनकी हमारी तरह की स्थूल देह ही नहीं है। अतः स्पष्ट है कि परमात्मा ने हमारी देह को नहीं बनाया। यह भी हम जानते हैं कि परमात्मा ने हम आत्माओं को भी नहीं बनाया, बल्कि हम आत्माएं भी ड्रामानुसार स्वनिर्मित हैं क्योंकि जिसे भी हम अजर अमर अविनाशी कहेंगे न तो कोई उसे बनाने वाला होगा और न ही उसका कभी विनाश ही होगा। आत्मायें तो ड्रामा में बनी बनायी हैं तो इससे क्या सिद्ध होता है कि परमात्मा हमारी देही (आत्मा) का भी निर्माता नहीं है? सच तो यह है कि आत्मायें, परमात्मा व प्रकृति जो सभी अजर, अमर अविनाशी हैं के मध्य एक अवनाशी ड्रामा चल रहा है, जिसकी हर ५००० वर्षों में हूबहू पुर्नावृत्ति होती है।

अब अगला प्रश्न उठता है कि क्या लौकिक मां-बाप ही हमारी देह के निर्माता हैं तो प्रश्न उठता है कि जब मां बाप ही उसके निर्माता हैं तो उसे वे जैसा रूप देना चाहें, दे देना चाहिए। बल्कि हम देखते हैं कि उनकी चाहना तो होती है, सुन्दर व स्वस्थ

ब्र० कु० ओम प्रकाश (बांदा)

संतान की और होता कुछ और ही है। वे तो किसी आत्मा को जिनका उनसे लगाव होता है अथवा पूर्व जन्मों के हिसाब किताब का लेखा-जोखा बाकी होता है, उसे (मां) अपनी कोख में अपना शरीर बनाने का स्थान दे देती है और नौ माह तक गर्भ के अन्दर रखकर पालन पोषण करती है। आत्मा केवल चार माह ही गर्भ में रहती है जब कि शरीर निर्माण के लिए जिम्मेदार तो उस शरीर में प्रवेश करने वाली वह आत्मा ही है। किस तरकीब से अणुओं व परमाणुओं को रखना है, यह कार्य आत्मा ही रिमोट कन्ट्रोल द्वारा पांच माह तक करती है । और फिर ४ माह शरीर में बैठकर भी यही कार्य आत्मा द्वारा सम्पादित होता रहता है।

जन्म कर्मानुसार

हम यह भी तो जानते हैं कि कोई भी आत्मा अपने कर्मों के अनुसार ही किसी स्थान विशेष, मां-बाप विशेष तथा वातावरण विशेष में जन्म लेती है। ऐसा इसलिए होता है कि जिसने जैसे पूर्व जन्मों में कर्म किये, उसी कर्म फल को भोगने के लिए वह विशेष परिस्थिति में जन्म लेती है। इससे सिद्ध होता है कि जैसे हम आत्माओं के कर्म होंगे वैसे ही हमारे शरीर का निर्माण भी होगा। हां, यह अवश्य सही है कि इसके निर्माण के लिए हम आत्मा अपनी होने वाली लौकिक मां की कोख का प्रयोग करते हैं। जब कि आत्मा के संस्कार सूक्ष्म रीति से पूर्व जन्म का शरीर छोड़ने से पहले ही जड़ प्रकृति को कन्ट्रोल करते हुए अपने अगले सूक्ष्म शरीर की तैयारी "रिमोट कन्ट्रोल" द्वारा कर्मों के फल के अनुसार मिलने वाली मां की कोख में शुरू कर देता है। और जब यह पिण्ड करीब साढ़े चार माह का हो जाता है तो आत्मा वर्तमान देह छोड़कर १३ दिन बाद यानी करीब ५ माह के तैयार पिन्ड में जो कि उसके आगामी लौकिक मां के यहां तैयार हो रहा है, प्रवेश कर जाती है और चार माह गर्भ में बिताकर जन्म लेकर यानी देह धारण कर दुनिया में अपना पार्ट अदा करती है।

ब्रह्मा तन के माध्यम से परमात्मा शिव द्वारा प्रदत्त ज्ञान के आधार पर लिखी पुस्तक "योग की विधि और सिद्धि" में विश्व प्रसिद्ध लेखक ब्रह्माकुमार जगदीशचन्द्र जी लिखते हैं -"सच्चाई तो यह है कि प्रत्येक युग में मनुष्यात्माओं की अवस्था

अथवा गुण-परिवर्तन के परिणामस्वरूप ही प्रकृति में भी गुण-परिवर्तन होता है। सतयुग में प्रकृति में भी सतोगुण प्रधान होता है क्यों कि मनुष्यात्मायें मन, वचन, कर्म से सतोगुणी अर्थात् सत्य, ज्ञान, गुण वाली होती हैं। इसी प्रकार, दूसरे युगों में भी प्रकृति में जो गुण प्रधान होता है, उसका कारण मनुष्यात्माओं का अपना ही गुण होता है। यह रहस्य हम यहां एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं:-

अनुमान कीजिए कि हम एक ही प्रकार की भूमि में गन्ना, नींबू और मिर्च बोते हैं। अब आप देखोगे कि यद्यपि भूमि की किस्म तो समान है तथापि प्रत्येक प्रकार का बीज पृथ्वी में अपने अपने अनुसार ही परमाणु आकृष्ट करेगा अथवा उनमें परिवर्तन ला देगा। भूमि की मिट्टी न सारी मीठी है, न खट्टी और न चटपटी। परन्तु बीज ही है जो अपने स्वभाव के अनुसार भूमि के परमाणुओं में स्वाद - विशेष ला देता है अथवा स्वाद - विशेष ही के परमाणु अधिक मात्रा में आकृष्ट करता है। अब, जैसे बीज, जल वायु और पृथ्वी तत्व को अपने अनुकूल कर लेते अथवा उसमें से अपने अनुकूल तत्व खींच लेते हैं वैसे ही आत्माएं भी अपने ही गुणों के अनुसार प्रकृति के परिमाणुओं को आकर्षित एवम् प्रभावित करती हैं और इसी के फलस्वरूप प्रकृति में भी सत, रज तथा तम का प्रादुर्भाव होता है। अतः स्पष्ट है कि ये गुण वास्तव में आत्मा ही के हैं, वही प्रकृति में इन्हें लाती है।

स्वास्थ्य भी वैसा होता है, चमड़ी भी वैसी ही होगी जैसी कि आत्मा की स्थिति, कर्म वसंस्कार।इस विषय में चरक संहिता का उल्लेख भी आवश्यक लगता है ।

सफेद दाग (ल्यूकोडर्मा) क्यों होता है। इस सम्बन्ध में चरकसंहिता में निम्न वचन मिलता है:-

"वचांस्य तथ्यानि कृतघ्न भावो निन्दा तुराणां गुरु थर्षणं च।।

पाप क्रिया पूर्व कृतं च कर्म हेतुः किलातस्य विरोधी चान्नम।।"

(चरक संहिता चिकित्सा ७/७७)

असत्य बोलना, कृतघ्न होना, देवताओं की निन्दा करना, गुरुजनों का अपमान करना , पाप कर्म करना, विरोधी अन्न पान का सेवन करना, पूर्व जन्म के कुकर्म पापादि कारणों से किलान्त (ल्यूकोडर्म) यानी सफेद दाग की उत्पत्ति होती है। ये कर्म त्वचा के रंगनुगुण को असर डालते हैं।

उपरोक्त तथ्य से यह समझ में आता है कि जैसे हम आत्माओं द्वारा कर्म सम्पादित होंगे वैसी ही हमारी देह का स्वरूप होगा। यानी सतकर्म होंगे तो शुद्ध पवित्र, सुन्दर, स्वास्थ्य काया मिलेगी और असत् कर्म होंगे तो अपवित्र, असुन्दर और अस्वस्थ काया मिलेगी। तो शिव बाबा की यह बात शत प्रति शत सत्य है कि जब हम देह और देह के रिश्तों को त्याग विकर्मों को दूर कर दिव्य गुण धारण करेंगे तो हमें लक्ष्मी-नारायण जैसी दिव्य काया (शरीर) भी प्राप्त होगी।

उपरोक्त तथ्य से यह सिद्ध होता है कि हमारे कर्मों के फलस्वरूप ही हमें अगले जन्म की देह प्राप्त होती है और साथ ही उसी जन्म में देह में अच्छे व बुरे किये कर्म स्वरूप परिवर्तन भी होता रहता है।

इसी विषय में भारत के प्रसिद्ध साहित्याकार पं० बालकृष्ण भट्ट जी का लेख याद आता है जिसमें उन्होंने लिखा था, "मनुष्य की बाह्य आकृति मन की प्रतिकृति है।" जिसका अर्थ हुआ जैसे आत्मा के गुण, कर्म व संस्कार वैसा ही शरीर। तो जब आत्मा पूर्ण पवित्र होगी तो देह भी पवित्र व सुन्दर एवम् स्वस्थ होगी।

शरीर निर्माण के लिए आत्मा स्वयं जिम्मेदार:

तो आओ मीठे मीठे भाई बहिनो, क्यों न हम सब श्रीमत पर चल पुरुषोत्तम संगम युग में दैवी पुरुषार्थ कर आने वाली सतयुगी, स्वर्गिक, सुखमयी समृद्ध दुनिया बनाने की तैयारी में प्राणपर्ण से जुट जायें। और विश्व महारानी श्री लक्ष्मी व विश्व महाराजन श्री नारायण समान स्वयं बनने का पुरुषार्थ करें। यूं उस सतयुगी दुनिया में मनुष्य १५० वर्षों से ऊपर की पूर्ण आयु का भोग स्वस्थ रह कर करेगा। हम सब लोग मकान व अन्य वस्तुओं को सुन्दर व अच्छी से अच्छी टिकाऊ बनाने की कला तो जान गए हैं व उसका प्रयोग भी कर रहे हैं, किन्तु हमें यह नहीं मालूम कि हम जिस देह रूपी मकान में स्वयं बैठे हुये हैं, उसका निर्माण कौन करता है? अब शिव बाब ने हमें स्पष्ट जानकारी दी कि मीठे बच्चो, जब तुम आत्माओं को ही उस देह रूपी घर में रहना है तो भला उसका निर्माण और कोई क्यों करेगा? उसका निर्माण तो स्वयं तुम ही करते हो और आगे भी तुम्हें ही करना है। और यह निर्भर करता है तुम्हारे कर्मों व संस्कारों पर। तो शुद्ध कर्मों व संस्कारों को कैसे किया जाये इस विद्या को सिखाने के लिए सर्व आत्माओं के कल्याणकारी शिव पिता परमात्मा ने जगह जगह समस्त विश्व में खुलवा दिये हैं आध्यात्मिक केन्द्र। नाम दे दिया "प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय।" अब इनमें जाकर जो व्यक्ति ईश्वरीय ज्ञान की पढ़ाई करेगा व राजयोग की शिक्षा

ग्रहण करेगा और अपने जीवन का परिवर्तन कर विश्व परिवर्तन करने के निमित्त बनेगा और विश्व की आत्माओं को ईश्वरीय सन्देश पहुंचायेगा और साथ ही उनकी सहायता तन, मन, धन से करेगा जो ऐसा कल्याणकारी कार्य कर रहे हैं, तो उसका परिणाम निस्सन्देह रूप से यही होगा कि वे शीघ्र होने वाले विनाश के बाद आने वाली सतयुगी दुनिया में, महान देवी देवता बनेंगे। आज जब हमें ऐसा सुन्दर अवसर मिल रहा है, तो भला क्यों चूकें हम। अहा! तो है न यह कितनी मजेदार बात कि कैसे हम सतयुग में श्री लक्ष्मी व श्री नारायण जैसी सुन्दर व स्वस्थ देह - रूप स्वयं प्राप्त कर सकते हैं। देवी देवता आज की तरह योन क्रिया द्वारा सन्तान को जन्म नहीं देते थे बल्कि वे आत्मा संयमी होते थे और योगबल द्वारा उत्पन्न सन्तान पवित्र व सुन्दरतम शरीर प्राप्त करती थी और १५० वर्षों का पूर्ण स्वस्थ जीवन व्यतीत करते थे। ऐसा ही सुखदायी समय पुनः इस पृथ्वी पर विनाश बाद आने वाला है। आओ, हम सब उस समय को शीघ्र लाने हेतु प्राणपर्ण से जुट जायें और सर्व का सहयोग लेकर सुखमय संसारा का निर्माण करें।

¤

बादलों के पार

गजानन्द अग्रवाल एडवोकेट,
ग्वालियर

हे शिव-पिता क्या खूब तूने मेहर की
बादलों के पार मैंने सैर की
आबू की गोद में नक्की का नजारा
डूबते-सूरज का यहां पर दृश्य प्यारा
सोने की चिड़िया का कभी यह देश मेरा
दिलवाड़ा - अचलगढ़ करता इशारा
कहते कहानी जालिमों के कहर की
बादलों के पार.....
लेक की लहरों की लय पर खूब झूमा
गुरु शिखर की ऊँचाइयों को मैंने चूमा
अधर देवी पर मंडराती जमकर घटाएं
सुखधाम पांडव भवन की अनुपम छटाएं
यहां विधि बताई आत्मा-परमात्मा के योग की।
बादलों के पार.....
इस धरापर मैं अभी तक था भरमाया
ओउम् - शान्ति भवन में आत्म ज्ञान पाया
दिव्य गुण धारणकिये, अवगुणों को गंवाया
ज्ञान गंगा में अज्ञान का कचरा बहाया
हे सदाशिव क्यूं तूने इतनी देर की
बादलों के पार.....
शांति का सहज पथ हमको दिखाया
अमृतबेला में हमें उठना सिखाया
भ्रातृत्व-प्रेम, सहयोग से हमको संवारा
पवित्र बनो. योगी बनो का देकर नारा
ज्योति - बिंदु का बोध करा, मुरली सुनाई धैर्य की
बादलों के पार.....
प्रकाशमणि जी दादी का अलौकिक प्रशासन
देश-विदेश में धूम मचाता उनका अनुशासन
बहनों - भाईयों ने दी हमें गुरु दीक्षा
अब और तुमको है किसकी प्रतीक्षा
"मधुबन" से अब टिकिट कटा लो जाने आने के फेर की
बादलों के पार.....

धर्म का सच्चा स्वरूप

ब्र. कु. प्रोफेसर कालिदास,
अहमदाबाद

विश्व में आजकल अनेक धर्म है । इन धर्मों के अनेक अनुयायी हैं । विभिन्न धर्मों की अनेक धार्मिक प्रवृत्तियाँ (कार्यक्रम, उत्सव, समारोह) होती रहती हैं । अनेक प्रवचन, सत्संग, सप्ताह होते हैं । धर्म के नाम पर काफी खर्च किया जाता है । अनेक किताबें छपती हैं । अनेक पत्रिकाएँ निकलती हैं । ये सब होते है—विश्व में परिवर्तन लाने के लिए, शान्ति लाने के लिये, वास्तव में धार्मिक प्रवृत्तियाँ होने पर भी दिन प्रतिदिन अपराधों का, अशांति का, हिंसा का दौर बढ़ता जाता है । तब मन में अनेक प्रश्न उठते हैं ।

धर्म की बातों में गहराई से सोचने पर इतना अवश्य महसूस होगा कि लोगों ने धर्म को एक साधन के रूप में ही अपनाया है ।धर्म का गुह्य,सूक्ष्म अर्थ समझ कर जीवन के साथ उसका संबंध स्थापित करने का प्रयास अल्प संख्या में हुआ है । मानव ने जो बाह्य चरण की एक सृष्टि बना दी है, उसमें उसने धर्म का भी इसी रूप में दर्शन किया है ।

मानव का एक भीतरी जीवन दर्शन है । दूसरा बाह्य जीवन दर्शन है । उसी तरह धर्म का भी एक भीतरी सूक्ष्म स्वरूप है । दूसरा है बाह्य स्वरूप । आजकल धर्म का भीतरी स्वरूप लोग भूल गये हैं । पवित्रता, सदाचार, श्रेष्ठ चरित्र, नैतिकता, दिव्यगुणों की धारण, परोपकार, दान, दया आदि जो शाश्वत मूल्य हैं, गुण हैं उनकी सही धारणा में मुनष्य पीछे रह गया है। क्योंकि ये सब उसे कठिन लगता है। विकारों के बढ़ते हुए प्रभाव के सामने वह हार जाता है, थक जाता है। कर्मेन्द्रियों की चंचलता के सामने वह झुक जाता है। विश्व के बहते प्रभाव के साथ चलना वह पसंद करता है। धर्म की खातिर त्याग, तपस्या की साधना करने की उसमें क्षमता नहीं रही है। इससे धर्म का यथार्थ आचरण, धर्म की यथार्थ परिभाषा के फलस्वरूप आने वाले दिव्यगुण उसमें दिखाई नहीं देते। सर्व के प्रति समभाव, भाईचारे की भावना उसमें देखने को नहीं मिलती। आन्तरिक शुद्धि उसके लिए कठिन साधना बन जाती ।एक ओर भौतिक सुखों की चाह है, विषयों की ओर प्रबल आसक्ति है, उपभोग की वृति है, तो दूसरी ओर उसको बढ़ावा देने के लिए, उसकी वृत्तियों में चंचलता लानेवाले दृश्य श्राव्य साधन, हल्की कक्षा का साहित्य उपलब्ध है। टी. वी., वीडियो का उपयोग काफी बढ़ रहा है। इससे मानव, धर्म जानने पर भी उसी प्रमाण आचरण नहीं कर सकता। इसी संबंध में दुर्योधन के शब्द याद आते हैं

" जानामि धर्मम् न च मे प्रवृत्ति,

जानामि अधर्मम् न च मे निवृत्ति ।"

अर्थात् मैं धर्म को जानता हूँ पर इसी प्रमाण व्यवहार नहीं कर सकता । मैं अधर्म को जानता हूँ पर इसे छोड़ नहीं सकता ।

धर्म का दूसरा स्वरूप बाह्य चरण का है ऐसे तो बाह्य और भीतरी स्वरूप एक दूसरे से संबंध रखते हैं। उसमें भी भावना, श्रद्धा और अर्थ समाहित है। आजकल प्रभु प्रेमी भक्त व्रत, जप, उपवास, नदी स्नान, कथा श्रवण, साधु संतों के प्रवचन सुनना, तीर्थों के दर्शन आदि धार्मिक क्रियाओं में, कर्मकांड में भाग लेते हैं । दान पुण्य करने के साथ साथ निश्चित समय के लिए पवित्र भी रहते हैं । पर यह ऐसा कार्य है जिसमें साधक को आत्मचिंतन भी करना चाहिए । वह धर्म से जुड़ी हुई जो भी क्रियायें करता हो उसमें पूरी समझ हो, आध्यात्मिक रहस्यों को जानकर वह करे यह अनिवार्य है केवल सभी करते हैं तो हम भी करें ऐसा अंधविश्वास नहीं होना चाहिए ।

हम धार्मिक कार्य समझ से, श्रद्धा से, सच्चे दिल से, शुद्ध भावना से करें । व्रत करने के साथ हमारी वृति भी बदलनी चाहिए । वृत्ति में विशालता और विश्व कल्याण की भावना आनी चाहिए । जप में एकाग्रता आनी चाहिए, व्यर्थ संकल्प दूर होने चाहिएं उपवास केवल आहार निषेध न बने पर बुद्धि परमधाम निवासी परमात्मा के साथ जोड़नी चाहिए। दुनयावी बातों के संकल्पों से मुक्त बनकर आत्मा उच्च-स्थिति में परमात्मा को याद करे । केवल नदी स्नान पावन नहीं बनायेगा । सच्चा ज्ञान ही आत्मा की मैल को धो सकेगा, आत्मा को पवित्र बना सकेगा । कथा, प्रवचन सुनकर उसे जीवन में धारण करने से ही सुनना सार्थक होगा । चारधाम की यात्रा करने से, किसी भी तीर्थस्थान की यात्रा करने पर देह रूपी मंदिर शुद्ध बना है या नहीं यह भी देखना पड़ेगा । धार्मिक क्रियायें केवल साधन हैं । इसे सही अर्थ में करने से ही प्राप्ति होती है । केवल दंभ या बाह्य चरण से तो कुछ भी प्राप्त नहीं होगा ।

धर्म के अंध-श्रद्धापूर्ण बाह्यचरण से धर्मांधता आती है । जब यह चरम सीमा में जाती है तब धर्म के नाम पर खून भी बहता है, अत्याचार, जुल्म, शोषण कुकर्म भी होते हैं । इन सभी ने धर्म की आत्मा का गला घोंट दिया है । ऐसे लोगों ने धर्म को बदनाम किया है । धर्म के नाम पर कभी भी हिंसा नहीं होनी चाहिए । वैर विरोध नहीं होना चाहिए । 'मजहब नहीं सिखाता आपस में

बैर रखना' । धर्म केवल जीवन निर्वाह का साधन नहीं बनना चाहिए । धर्म सत्ता का कभी नशा नहीं आना चाहिए । धर्म सतोप्रधान बनने की शिक्षा देता है । सदाचार सिखाता है । दिवयगुणों की मूर्ति बनाता है । समभाव, समत्त्व सिखाता है जिससे विचार, वाणी और व्यवहार में काफी परिवर्तन आता है । जीवन की प्रत्येक क्रिया में दिव्यता आती है । धर्म-स्थान चैतन्य मानव मंदिर बनाने का कार्य करें । मानव को विषय विकार, व्यसनादि बुराईयों से छुटकारा दिलाने का कार्य करें । जब आत्माओं की सच्ची सेवा होगी तो दुःखी अशांत आत्माओं को राहत मिलेगी। परमात्मा से जो विपरीत बुद्धि हैं उन्हें परमात्मा से प्रीत बुद्धि बनाना - यह धर्म का कार्य है । मानव सच्चे अर्थ में मानव बनता है, वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को सिद्ध करता है तब ही वह सच्चा धार्मिक कहलाता है ।. आज ऐसे ही धर्म की आवश्यकता है ।

पवित्रता का पुरुषार्थ

पुरुषार्थ में थकान का अनुभव उन्हें होता है जो श्रीमत को केवल नियम मान कर चलते हैं । जब पुरुषार्थी श्रीमत को नियम मानता है अर्थात् उसके साथ उसका मन नहीं है । वह तो वैसे ही हुआ कि रोगमुक्त होने के लिए हम कड़वी से कड़वी गोली गुटक जावें; या बिस्तर पर पड़े रहें । रोगी के मन में इस गोली के प्रति अनिच्छा होती है । उसके मन की दशा यह होती है कि किसी तरह गोली खा कर रोग से मुक्त हो कर फिर मनमाना जीवन व्यतीत करें । जब तक श्रीमत को नियम प्रमाण माना जावेगा तब तक थकावट का अनुभव होता रहेगा ।

जीवन सुधर जाए यह भावना की कमी पुरुषार्थ में थकावट का अनुभव कराती है । नियम का केवल पालन करना आगे चलकर उत्साहहीन बना देगा। ज्ञान, आनंद लेने की विधि है । ज्ञान केवल ज्ञान के लिए ही रहा तो चलती गाड़ी कभी भी खड़ी हो जाती है।

अपवित्रता के संकल्प जब उठते हैं; इसका अर्थ यही हुआ कि पवित्रता के प्यार में कमी है या पवित्रता से मित्रता में कमी है या पवित्रता व्यर्थ की चीज़ लग रही है। जब पवित्रता में रस नहीं मिलता तो मन अपवित्रता का रस लेने चाहता है क्योंकि मन बड़ा ही रसीला है उसे रस चाहिए ।

बाबा बुद्धि द्वारा कभी कभी पकड़ में आता है । वह जितनी देर हमारी बुद्धि की पकड़ में रहता है तभी तक रस आता रहता है और तभी तक अपवित्रता के संकल्प जन्म नहीं लेते । तभी तक पुरुषार्थ में ढीलापन नहीं आता । बुद्धि से बाबा गायब हुआ और अपवित्रता ने अपना डेरा जमाया । बाबा बड़ी जल्दी बुद्धि से फिसल जाता है । जहाँ बाबा बुद्धि से फिसला कि माया आ धमकी अपनी पूरी फौज के साथ । परमात्मा लोगों की पकड़ के बाहर रहता है इसीलिए वे अपवित्रता की ओर भाग जाते हैं । परमात्मा अत्यंत सूक्ष्म होने के कारण वह लोगों की समझ में भी नहीं आता । जो उसे समझ लेते हैं वे ही पवित्रता में टिके रहते है स्वयं की इच्छा से । परमपिता का प्यार एक सुखद अनुभूति ही है जो केवल महान् कल्याणकारी है; इसका अनुभव पद्मापद्म भाग्यशाली आत्माओं को ही होता है, शेष का अनुभव ऊपरी ऊपर रहता है ।

अपवित्रता का रस छोड़ पवित्रता का रस पीना कम बड़ी बात नहीं है । बाबा यही रस पीने को कहते हैं । जिन्होंने यह रस पिया उन्होनें अमृत पिया । उनका सभी कुछ अमृत सदृश्य हो गया । उसके जैसी भाग्यशाली आत्मा इस विश्व में अन्य कोई नहीं ।

भक्ति राजयोग को छू नहीं सकती । इसलिए बाबा ने कहा कि महान् से महान् भक्त सतयुग में नहीं जा सकता। भक्ति परमपिता से वर्सा भी नहीं दिला सकती । वह देवता भी नहीं बना सकती । राजयोग की सबसे बड़ी मर्यादा है पवित्रता । राजयोग में जरा भी अपवित्रता नहीं चलेगी। जो लोग थोड़ी सी भी अपवित्रता चलाना चाहते है उन्हीं का पुरुषार्थ ढीला पड़ जाता है । वे फिर चाहते है कि जल्दी विनाश हो और हम राजयोग के झंझट से छूटें । जिनकी बुद्धि ने परमपिता को पकड़ लिया वो फिर गाने लगते है "पाना था सो पा लिया बाकी अब क्या रहा ।" या फिर गाते है "ये संगम का युग न बीते, रहे सदा तेरा अमृत पीते ।" उन्हें जरा सी भी अपवित्रता हजार बिच्छुओं के डंक की मारसे भी अधिक पीड़ा पहुँचा देती है ।

राजयोगी जीवन जैसा पवित्र जीवन और कोई नहीं है, इसमें शक नहीं है । राजयोग जीवन के प्रति वह दृष्टिकोण देता है जो कहीं नहीं मिलेगा । ऐसी समझ वाली आत्मा का पुरुषार्थ कभी भी न तो ढीला होता है और न तो पुराना ।

ब्र० कु० आर० एल० श्रीवास्तव
रायपुर

¤

आत्मा, परमात्मा और योग

पांच तत्वों से बने शरीर का, मन-बुद्धि-संस्कारों वाली आत्मा से जो भेद है, उसे हम अन्य युक्तियों के अतिरिक्त एक सांप की मिसाल द्वारा भलीभांति समझ सकते हैं। किसी एक सांप के आने पर भिन्न-भिन्न प्रकार के मनुष्यों में भांति-भांति के संकल्प चलने लगते हैं। एक साधारण मनुष्य सांप के आने पर उससे भयभीत होकर उससे दूर होकर भागने लगेगा। भक्त सांप की पूजा करने, उसे दूध पिलाने में तल्लीन हो सकता है, जबकि एक सपेरा उसी सांप को अपनी बीन बजाकर अपनी जीविकोपार्जन के लिए एक अपनी पिटारी में पकड़ लेगा। इससे स्पष्ट हुआ कि सांप के आने पर प्रत्येक के अपने-अपने संकल्प भिन्न-भिन्न प्रकार से चलने लगे। अब, ये संकल्प करने की शक्ति तो मन में है जो आत्मा की एक योग्यता है। अतः प्रत्येक प्राणी के अंदर कोई प्रतिक्रिया करने वाली चैतन्य सत्ता अवश्य है, जिसका कार्य संकल्प उठाना, महसूस करना तथा निर्णय करके कर्मेन्द्रियों द्वारा कर्म कराना है। वही चैतन्य सत्ता मन के द्वारा संकल्प उठाती, रिसीव करती है, बुद्धि के द्वारा निर्णय करती है और संस्कारों के आधार पर अच्छी या बुरी प्रतिक्रिया करती है।

संगमयुग में जीवन के नियम ही ऐसे हैं कि हर श्रेष्ठ कर्म करने में विघ्न अवश्य आते हैं; अतः ज्ञानी आत्मा उन विघ्नों की परवाह न करके संपूर्ण उत्साह से श्रेष्ठ कर्मों में जुटी रहती है और फलस्वरूप वे कार्य संपन्न होते हैं और इससे संस्कार पवित्र, अनुभवी व शक्तिशाली बनते हैं व उसी अनुसार स्वभाव दैवी व भावनाएं उदार होती जाती हैं। इससे क्रमानुसार हमारा दृष्टिकोण उदार हो जाता है और फिर हर परिस्थिति में व हर व्यक्ति के प्रति हमें पवित्र, स्नेहयुक्त संकल्प ही आते हैं। इस प्रकार हमारे ऊपर अन्य व्यक्तियों के नकारात्मक कर्मों व विचारों की हानिकारक प्रतिक्रिया नहीं होती है, बल्कि उनके ऊपर रूहानी स्नेह व रहम बढ़ता जाता है और इस प्रकार हम निर्भय होकर निर्वैर भावना व कर्म से वैरी के हृदय को जीत लेते हैं। यही हमारी आत्मा की गुप्त दैवी शक्ति है, अथवा ज्ञान-योग बल या पवित्रता की चरमसीमा है। यह समझ कि "आत्मा ही अपना मित्र और अपना शत्रु है" भी हमें अलौकिक शक्ति देती है, क्योंकि इससे हम अंतर्मुखी हो जाते हैं व अपने संकल्प, वाणी व कर्मों की ओर अधिक ध्यान व बाद में चैकिंग भी करते जाते हैं। कबीर के इस दोहे से 'तेरा वैरी कोई नहीं, तेरा वैरी फेल। अपना फेल सुधार ले, गली-गली कर सैर' के अनुसार हम किसी व्यक्ति या परिस्थिति से आंतरिक रीति में नहीं डरते और न संदेह, शंका आदि करते हैं क्योंकि मनोवैज्ञानिकों के अनुसार संदेह की जननी भय ही है और भय की अज्ञान अथवा मिथ्या ज्ञान। इस प्रकार आत्मा के इस वृत्ताकार चार्ट की समझ से हम अंतर्मुखी होते जाते हैं और अंतर्मुखता ही समस्त दैवी गुणों का स्रोत है, क्योंकि इसके आने पर मानव को अपनी गुप्त व सोई हुई कमज़ोरियों का स्वतः अनुभव होने लगता है और अनुभव के पश्चात् पुरुषार्थ, ध्यान व चैकिंग तो स्वतः ही होती है। जब तक ध्यान, पुरुषार्थ या चैकिंग नहीं है, तब तक न तो वास्तव में पुरुषार्थी अंतर्मुखी ही है और न अनुभवी ही, तब तक तो वह अधिक-से-अधिक 'पंडित' है।

योग का लक्ष्य है अपने श्रेष्ठ संकल्पों को कार्यान्वित करने की शक्ति। वास्तव में जैसा कि कहा भी गया है 'योगः कर्मसु कौशलम्', कि यह योग की शक्ति हमारे शुद्ध संकल्पों में छिपी हुई है और जैसे-जैसे हम अपने संकल्पों को लक्ष्य की ओर केंद्रित करते जाते हैं, लक्ष्य नज़दीक आता जाता है, यह मनोवैज्ञानिक सत्य है। आज हमारी बुद्धि अनेक व्यक्तियों व वस्तुओं में आसक्त होने के कारण मन को शासित नहीं कर पाती है और फलस्वरूप मन बार-बार लक्ष्य से हट जाता है। मन को लक्ष्य की ओर हटने से रोकना और ईश्वरीय स्मृति में लगाये रखना, इस अर्थ में योग की परिभाषा है।

अतः इसके लिए हमें बुद्धि की भिन्न-भिन्न साकार व्यक्तियों व वस्तुओं से आसक्ति हटाना अनिवार्य है। यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि मानव की बुद्धि जिस ओर लगी रहती है, उसी में आसक्त हो जाती है। अतः उसकी आसक्ति साकारियों से हटाने के लिए प्रेम सागर शिवबाबा ने हमें निराकारी वतन में बिंदुस्वरूप शिव को ज्ञान सहित याद करने का निरंतर पुरुषार्थ बताया है, जो ही योग है। स्पष्ट है कि ऐसा करने से बुद्धि की साकार व्यक्तियों व वस्तुओं से आसक्ति टूट जाती है और फलस्वरूप अनुशासित होकर हम सहज रीति से अपने लक्ष्य के प्रति संकल्प चलाते जाते हैं, जिससे पुरुषार्थ सफलीभूत हो जाता है यही योगबल है।

■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■

मूरत मुसकाई : एक अनोखी अनुभूति

जानकी वल्लभजी शास्त्री, मुज़फ्फरपुर

"तो तुम आ गए? खूब घूम फिरकर देख-सुन लिया? अच्छी तरह आज़मा लिया?"

मुजफ्फरपुर केन्द्र की संचालिका ब्र० कु० रानी बहन के आग्रह पर मैं हाजिर हुआ था। आगे भी कभी शिवरात्रि के अवसर पर कार्ड भेजे जाते थे पर इस बार का आग्रह अपने ढंग का पहला था।

थोड़ी सी औपचारिक बातचीत के बाद रानी बहन मुझे उस कक्ष में ले गयी जहाँ बाबा की उज्ज्वल प्रतिमा स्थापित है। कक्ष में प्रवेश करते ही अजूबा हो गया। रानी बहन ने बिजली का बटन दबाया जिससे मूर्त्ति मुस्करा उठी और मुझे करंट current सा लगा। मैं अपनी ओर से सँवर कर पद्मासन में बैठ गया। बाबा से आँखे चार हुईं तो वह मुस्कान मीठी चुटकियों में बदल गयी जैसे वह कह रहे हों:—

अच्छा, तो आखिरकार तुम आ ही गए। बहुत आना-कानी की। लोग और वेद दोनों आड़े आए। लोक ने शेख चिल्ली की कहानियाँ सुनाई, वेदों ने कसकर बाहें पकड़ीं : उधर कहाँ? पर तुम अपने आप में सिकुड़े हुए से आँख बचाकर कौतुकवश यहाँ आ गए? बहरहाल अब कैसा लग रहा है? डरे-डरे से दिखते हो। सहज हो जाओ।

"जी"—मैंने कहा : 'कोशिश कर रहा हूँ। भालोचको की छीछा-लेदर करने के लिए भी अपना अनुभव आवश्यक है। यों मेरा लक्ष्य "ओम शांति" ही है। किसी की छीछा-लेदर करने से कौन-सी सिद्धि प्राप्त होने वाली है। फिर भी मेरा मन पूर्वाग्रह-शून्य नहीं है'।

"दरअसल मैंने आप की मुरली नहीं सुनी। इधर की जो सुनी है, वह अधिक आरंभिक है। वेद-वेदांत पढ़े हुए के मन को नहीं छूती। बाप-दादा और बच्चे—जैसे शब्द कम उमर के लोगों के लिए चाहे ठीक भी हों, हमारी लम्बी आर्य परम्परा के शब्द नहीं हैं, मेरी अवस्था बाधा डालती है, मुझे शब्द रास नहीं आते, "शिव ठीक है नमः शिवाय च शिवतराय च नमः ! तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु' ये सारे वेद वाक्य हैं। शिव बाबा कुछ जमता नहीं है। गुरु शिष्य परम्परा में क्या दोष है।

देखते-देखते मूर्त्ति की आँखों का रंग बदल गया। काटो तो खून नहीं जैसा मेरा हाल हो गया। विस्मय हुआ, दहशत नहीं, यही लक्ष्य करने की बात थी।

बदली आँखें बदली सी रंग बरसीः—

"तो यह बात है? अब मेरी सनो : पुराने रिश्ते नाते देवी देवताओं से दुनिया को जहाँ ले आए है: हमारी कोशिश उसके आगे की है।

बाबा जोड़ देने से अपनापन बढ़ जाता है। तब शिव अलग-थलग नहीं रह जाते। शिव बाबा हमारे नज़दीकी, अपने सगे, बहुत करीब के हो जाते हैं।

सिर्फ शिव हमें रोज जगा भी सकते हैं: नहीं भी जगा सकते हैं। नित नया प्रबोधन दे भी सकते हैं, नहीं भी दे सकते हैं। मगर शिव बाबा तो रोज तड़के जगाते और हमें दिन प्रतिदिन के कर्त्तव्य को याद भी दिलाते रहते हैं।

तुम्हे आलसी नहीं बनने देते। बरतन चाहे किस मेटल का हो। हर रोज धो-मांज कर चमकाते रहते हैं। तुम जो सुनते हो, सीखते हो उसे तुम्हारे जीवन में उतरवाने के लिए वह कटिबद्ध रहते हैं। अपने बाबा जो हैं, बच्चों को दर बदर भटकते नहीं देख सकते।

तुम्हारा दिमाग कोई स्टोर नहीं है, जिसमें यहाँ वहाँ से बटोरकर लाया गया ज्ञान इकट्ठा करते चले जाओ।

बाबा टोकते हैं : यह तो उठा लाए हो, इसे तुमने पाया कहाँ है? पाने का दावा करते हो उसकी पहचान दो—अपने शुद्ध आचरण से, पवित्र व्यवहार से, शांति बरसाते अनमोल बोल से।

मेरे रोंगटे खड़े हो गए। कुछ देर पलकें नीची कर ठहरी-ठहरी सी पैनी आँखों की निःशब्द भाषा पढ़ता सुनता रहा। आँखे मुँदने पर जो दीख रहा था तब देखना बंद हो गया। जब मैंने फिर नजर उठायी। इस बार नीले आकाश में हल्की सुर्खी घुली दिखलाई दी। हंसी में व्यंग मिलाना था। सादगी और सरलता के भीतर से हृदय आरपार दिख रहा था। आँखें बोल रही थीं:—

"उमर की क्या बात करते हो? यह तो मैच्योर होने का गर्व भर है। यहाँ आये हो तो बच्चे ही हो। बच्चा रह बाप दादा का प्यार पाया जा सकता है। जिसकी कशिश यहाँ तुम्हें खींच लायी है। उसकी नजर में तुम बच्चे ही हो। सोच कर देखो क्या वह सब हासिल कर चुके हो जिससे बचपन की ताजगी बुजुर्गी में तबदील हो जाती है? यकीन

करो तुम इटर्नल चाईल्ड हो।

घड़ी भर के लिए मैं खो सा गया। सुदबुध जाती रही। आँखो का रंग फिर बदला हुआ था। पपोटी की सफेदी में बेपनाह चमक थी। पुतलियाँ नीली-नीली।

मैं जैसे नई दुनिया में चोर दरवाजे से घुस आया हूँ कुछ ऐसा ही अनुभव हो रहा था। मेरे लिए यहाँ का सबकुछ अनजाना था। मन ही मन ओमशांति की आवृति करने लगा। एक अजब सा बदलाव अपने भीतर अनुभव कर रहा था। सोच रहा था वाकई क्या मैंने अब तक जो पढ़ा लिखा वह सब बेकार था। मैं तो सिद्धान्त के रूप में ही कुछ थोड़े बहुत ज्ञान का दावा कर रहा था। जीवन अनजानते उससे प्रभावित हुआ हो तो, न हुआ तो, आया राम गया राम को कुछ अता-पता न था। यह दूसरी ही दृष्टि है। दुनिया को जो होना है उसकी दृष्टि उसे स्पष्ट दीख रही है। दुनिया को जो होना चाहिए उसके लिए नित्य अभ्यास का प्रयास चाहिए मुस्कान कह रही है :—

''मंजिल सामने है। रास्ता भी साफ सुथरा है इन आँखो में झाको। इनसे पवित्रता झर रही हो तो उससे आंज कर अपनी आँखे पवित्र कर लो। फिर आगे बढ़ो। कुंठित और शंकित चित से कुछ नहीं पाया जा सकता। सुदृढ़ आस्था, अडिग विश्वास से ही नया निर्माण संभव है। सामने की दुनिया बहुत पुरानी है। द्वेष, दम्भ, ठगी, झूठ और भय दुराचार ने अब उसके तन मन को जर-जर कर दिया है, नयी दुनिया की खोज जारी। मगर नया तो वह भी हो सकता है जो इससे भी बद्तर हो। पुराने औजार घिस गये हैं। अब उनसे नया निर्माण संभव नहीं है।

''यह नया प्रयोग है, शांति का, किन्तु सक्रियता का पथ, सदाचार के द्वारा स्वार्गिक उँचाईयों को छुने की भरपूर कोशिश''

मैं सब समझ रहा था, मगर मन मानता न था। अब तक की जीवन शैली को एकबारगी नकारना कठिन था। मेरा मुँह मुरझा रहा था। जब कि मूर्ति की शिशु-सी दुधिया हँसी फिर फूटी :— ''जल्दी क्या है? और सोच लो। लिखी स्लेट पर नया लिखना असम्भव है। पहले का लिखा साफ कर लो''।

मैं अचकचांया-सा उठा। दायें बायें देखा। कक्ष में दूसरा कोई न था। रानी बहन की ओर लपका। तिनक कर कहा। बाबा से झगड़ आया हूँ। ■

नवाशहर : सुखमय संसार कार्यशाला के पश्चात् ब्र० कु० कृष्णाजी, ब्र० कु० राजकुमारीजी, सुगर मिल के मैनेजिंग डायरेक्टर तथा अन्य अधिकारियों के साथ।

क्रोध बोध को खा जाता है। क्रोध अबोध की निशानी है,

बड़ौदा (मंगलवाड़ी) : सेवाकेन्द्र पर "तनावमुक्त जीवन" पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए डी. डी. ओ. रवि जी। साथ में ब्र० कु० गीता बहन बैठी हैं

स्व-उन्नति तथा सर्व की उन्नति के लिये कुछ धारणा बिन्दु

७ अप्रैल १९८९ को ओम शान्ति भवन, माऊंट आबू में मीटिंग में आये हुए भाई बहिनों की अलग-अलग ग्रुप्स में भिन्न-भिन्न विषयों पर १२ वर्कशाप (कार्यशालायें) चलीं, उसमें जो मुख्य प्वाइंटस निकलीं-उनका सारांश इस प्रकार है:-

योगबल

(अ) योग को बल क्यों कहा जाता है?

१. बल अर्थात शक्ति ही मानव जीवन की सफलता का सार है। योग ही हमारे जीवन में सर्वोत्तम लक्ष्य पाने के लिए शक्तियां देता है। योग का बल है तो कर्मों में श्रेष्ठता आती है। २. जो संस्कार बदलना असम्भव लगता है वह योगबल द्वारा सहज ही परिवर्तन हो जाते हैं, असम्भव;सम्भव हो जाता है। मेहनत कम, प्राप्ति ज्यादा दिखाई देती है। ३. योगबल से विकारों पर विजय सहज हो जाती है। ४. जैसे सूर्य में बल है, जलाने का भी, रोशनी देने का भी वैसे याद का बल पुराने संस्कारों को मिटाता है, दैवीगुणों की धारणा सहज ही करा देता है। नया जीवन मिल जाता है। ५. जैसे बीज शक्तिशाली है, सम्पूर्ण वृक्ष के विस्तार की क्षमता है क्योंकि बीज में ग्रहण करने का बल है, सूर्य से, पानी से, हवा से, मिट्टी से, जब तक ग्रहण करता है, बढ़ता है। इसी प्रकार से आत्मा, योगबल से सर्व शक्तियां प्राप्त कर लेती है। उसमें समाने की शक्ति, सत्यता की शक्ति आजाती है। परखने या निर्णय करने की शक्ति मिल जाती है, जिस द्वारा सफलता की ओर कदम बढ़ते रहते हैं। ६. शक्ति अर्थात् बल ही हमें अधिकारी बनाता है, जिसमें अधिकारीपन की शक्ति है, वही अधीन बना सकता है, पुराने संस्कारों पर, कर्मेन्द्रियों पर अधिकार दिलाने वाला योगबल ही है।

(ब)योगबल जमा कैसे करें?

१. जमा करने की विधि है प्राप्ति अधिक हो, खर्च कम हो। अमृतवेले बीजरूप स्थिति में स्थित होने से योग का बल जमा कर सकते हैं। २. एकाग्रता की शक्ति, एकान्त और अन्तर्मुख अवस्था में स्थित होने से योग की शक्ति जमा हो सकती है। ३. एकनामी बनने से योग बल जमा होता है। एकनामी अर्थात् एक बाबा दूसरा न कोई। ४. सदा शुभ भावना, शुभ कामना रखने से योगबल जमा होता है। व्यर्थ बोल, व्यर्थ संकल्प न हों। ५. सन्तुष्ट रहें और सन्तुष्ट करते रहें तो पुण्य जमा होता है, दुआयें मिलती रहती हैं। ६. मान-शान का त्याग करने से योग का बल जमा होता है। ७. कम बोलो, मीठा बोलो, धीरे बोलो, स्वमान में रहकर बोलो तो योगबल जमा होता है। ८. रहम की भावना, भाई-भाई की दृष्टि से योग का बल जमा होता है।

(स) जिसके पास योग का बल होगा – उसकी निशानियां क्या होंगी?

१. योगी सहयोगी होगा, फ्राख़ दिल वाला होगा, योगी सदा तृप्त होगा। वह महादानी होगा, जिसको जो चाहिए उसके द्वारा वही मिलेगा। २. वह किसी भी प्रकार के आकर्षण से परे रहेगा। ३. उससे हरेक को महसूस होगा कि यह मेरा है। वह सबको प्यारा लगेगा। ४. उसका सत्यता पर निश्चय होगा, अडोल होगा। ५. जिसके पास योगबल है वह निराकारी, निर्विकारी, निरअहंकारी होगा।

(द) योग का प्रयोग कैसे करें?

१. योग का प्रयोग बेहद कार्य अर्थ करना है। स्व के प्रति या किसी स्वार्थ प्रति नहीं। २. कोई व्याधि आती है तो भी योग का प्रयोग कर सूली से कांटा अनुभव करना है। ३. कोई भी बेहद कार्य प्रति संगठन में योगबल का प्रयोग करें ताकि कार्य निर्विघ्न समाप्त हो। ४. कोई दुर्घटना होती, बड़ी व्याधि आजाती तो भी एक दो को योग की मदद करनी चाहिए, योग की शक्ति कष्ट की फीलिंग से मुक्त करती है। औरों को लगता है कि वह तकलीफ में है लेकिन वह खुद अन्दर आराम का अनुभव करता है। योग के प्रयोग से हम ऐसे विचित्र अनुभव कर सकते हैं।

पास विद आनर (Pass with honour) होने के लिए कौन सी विशेषताएं चाहिए।

१. सदा ३. शब्द याद रहें :- पास, पास, पास। हर विघ्न या परिस्थिति के पेपर को पास (Pass) करना है। बाप के पास (समीप) रहना है। पास अर्थात् बीती को बीती करना है। २. अपनी दिनचर्या पर, पढ़ाई वा याद की स्थिति पर विशेष अटेन्शन देना

है। ३ स्वप्न में भी पवित्रता की सम्पूर्ण स्टेज को धारण कर सम्पूर्ण निर्विकारी बनना है। ४. एक बाबा से ही सर्व सम्बन्धों का अनुभव करना है, देहधारियों से लगाव नहीं रखना है। ५. विघ्न-विनाशक रहना है, शुद्ध संकल्पों से खज़ाना भरपूर रखना है। ६. कर्मभोग को कर्मयोग में परिवर्तन करना है। हर कर्म में रायल्टी रखनी है। ७. लक्ष्य क्लीयर और टाइट हो, रजिस्टर ठीक हो, रिगार्ड देने का रिकार्ड ठीक हो, स्वयं के स्वयं जज बनें . इन्हीं मुख्य धारणाओं से पास विद आनर बन सकते हैं।

पास विद आनर किसे कहा जाता है?

१. पास विद आनर अर्थात् जिसकी मन में भी कभी हार न हो, समस्या स्वरूप के बजाए समाधान स्वरूप बनें। २. करनी-कथनी समान हो। अवस्था एकरस, अचल अडोल हो। मजबूर होने के बजाए मजबूत हों। ३. गुणग्राही हों, सर्व के दिलों को जीतने वाले हों। ४. सर्व से न्यारे-प्यारे, हर्षित हों। सर्व अधिकारी, सदा सत्कारी एवं विश्व कल्याणकारी हों। ५. पास विद आनर अर्थात् मायाजीत, प्रकृति-जीत, कर्मेन्द्रिय-जीत, निद्राजीत। ६. त्याग और तपस्या, लव और ला , सिम्पुल और सैम्पुल, स्वयं और सर्व का बैलेन्स रखने वाले हों। ७. बिन्दु बन, बिन्दु बाबा को याद कर बिन्दु लगाने वाले हों।

चारों सबजेक्ट में पास विद आनर होने के लिए क्या-क्या धारणाएं चाहिए?

(अ) *ज्ञान की सबजेक्ट में पास विद आनर होने के लिए:* १. स्टडी करने का, विचार सागर मंथन कर ज्ञान की गहराई में जाने का शौक हो। २. मुरली को सन्मान दे मुरली रोज सुने और सुनाये। मुरलीधर बनें। ३. ज्ञान की हर प्वाइंट को शस्त्र के रूप में प्रयोग करें। ज्ञान की गुह्यता को समझ प्वाइंट रूप बने। ४. स्वदर्शन चक्रधारी बन मायाजीत, जगतजीत बनें, मानअपमान, निंदा स्तुति, हार जीत में समान रहें।

(ब) *योग की सबजेक्ट में पास विद आनर होने के लिए:* १. अव्यभिचारी याद हो। सर्व सम्बन्धों के अनुभवों में खोया हुआ हो। २. अमृतवेले के महत्व को बुद्धि में रख शक्तिशाली योग करे। सरल व सहजयोगी और निरन्तर योगी हो। लिंक सदा जुटी रहे। ३. बुद्धि की लाइन क्लीयर हो। मन के संकल्पों में हलचल न हो। एक सेकेण्ड में आर्डर होते ही अशरीरी स्थिति में स्थित हो जाएं। चलते-फिरते लाइट-हाउस और माइट-हाउस हों। ४. सदा साथी को साथ रखते साक्षीपन की स्थिति का अभ्यास हो।

(स) *धारणा की सबजेक्ट में पास विद आनर होने के लिए:* १. ईश्वरीय नियम, मर्यादाओं का पूर्ण पालन हो। २. स्वयं पसन्द, लोक-पसन्द, प्रभू पसन्द हो। ३. सर्व विकारों का अंश सहित त्याग हो। ४. एक भूल बार-बार दोहराई न जाये। ५. ब्रह्मचर्य की पालना के साथ-साथ ब्रह्मचारी भी हो। ६. व्यक्ति, वैभव, वातावरण की आकर्षण में न आये। ७. सर्व शक्तियां आर्डर में हों।

(द) *सेवा की सबजेक्ट में पास विद आनर होने के लिए:*

१. सदा याद रहे कि सफलता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। २. सेवा में हदें न हो, बेहद का सेवाधारी हो। ३. साधनों का आधार छोड़ साधना द्वारा सेवा करे। ४. नाम-मान-शान की इच्छा से सेवा न करे। ५. निमित्त भाव रख नम्रता को धारण कर सेवा करे। निष्काम सेवाधारी हो। ६. सेवा दिल की हो, सिर्फ दिमाग की नहीं। सेवा में अपना भाग्य समझ, स्वयं को खुदाई खिदमतगार समझ सेवा दिल से करे। कहने से नहीं। ७. सेवा करते बाबा को जिम्मेवार समझ सदा हल्का रहे।

विजयी रतन की निशानियां क्या हैं?

१. विजयी रतन की पहली निशानी-उसका हर संकल्प सिद्धि स्वरूप होगा। २. कर्मेन्द्रियां पर पूरा कन्ट्रोल होगा। ३. उसके बोल एवं कर्म पर औरों को भी विश्वास होगा, वह असफलता में भी सफलता खोज लेगा। ४. पल में स्व-परिवर्तन करने वाला होगा। ५. वह निर्भय, निर्विकार एवं निरअंहकारी होगा। ६. उसकी हर आत्मा प्रति निर्दोष वृति होगी। किसी से भेदभाव नहीं रखेगा। ७. उसकी प्रकृति दासी होगी। हर परिस्थिति में विजयी होगा। ८. वह सदा प्रसन्नचित होगा, उसे ड्रामा पर अटल विश्वास होगा।

रोज की दिनचर्या में अपने आपको विजयी बनाने की चेकिंग क्या है?

१. रोज की दिनचर्या में विजयी बनाने के लिए अमृतवेले से रात तक अपने हर संकल्प, बोल और कर्म की चेकिंग चाहिए। चेक करना है कि:-

(अ) अमृतवेले का योग पावुरफल रहा? (ब) सारे दिन में ज्ञान-योग-धारणा एवं सेवा की सबजेक्ट में बैलेन्स रहा? (स) सारे दिन में किसी भी प्रकार की खामी (कमजोरी) तो नहीं रही? (द) सम्पूर्ण भाई-भाई की दृष्टि रही? किसी व्यक्ति वैभव या वस्तु में लगाव तो नहीं रहा? (क) नष्टोमोहा स्मृतिलब्धा कहां तक रहे? (ख) दिन भर के संकल्प, सम्बन्ध, सम्पर्कमें, मन-वचन-कर्म में कोई हार तो नहीं हुई? (ग) सारे दिन में जो भी कार्य किया - वह स्वार्थ के लिए

किया या परमार्थ के लिए? (घ) कर्म करते-हर्षितमुख, निर्माणचित, गम्भीर, रहे? (ड.) मात-पिता के समान-विश्व कल्याण की सेवा पर ही रहे?

विजयी बनने वाली आत्मा-ऐसी सूक्ष्म चेकिंग करते सम्पूर्ण विजयी मात पिता को सामने रख स्वयं को परिवर्तन करेगी। वह सदा फालो फादर करेगी।

विश्व कल्याणकारी स्वरूप क्या है? सर्व अधिकारी, परोपकारी और सत्कारी, इसका स्पष्टीकरण तथा प्रैक्टिकल स्वरूप क्या है?

विश्व कल्याणकारी स्वरूप

१. हर कर्म में अलौकिकता और दिव्यता हो, सदा स्मृति हो - स्पष्टीकरण तथा प्रैक्टिकल स्वरूप क्या है? २. सर्व आत्माओं प्रति कल्याण की भावना हो, रहमदिल के साथ क्षमा भाव हो। ३. बेहद की भावना हो। अथक हो, निःस्वार्थ भावना हो। ४. अपने हर गुण तथा शक्ति को सेवा में लगाये। साथ-साथ दूसरों से कार्य करवाने की कला हो। जिस आत्मा में जो विशेष गुण हो, उससे सेवा ले। ५. सर्व को एक सूत्र में बांधने की शक्ति हो। उसके लिए स्नेह और सहयोग का प्रयोग करे। ६. लाइट-हाउस और माइट-हाउस की स्थिति में स्थित हो अपने पवित्र और पावरफुल वायब्रेशन सारे विश्व में फैलाना - यही विश्व कल्याणकारी स्वरूप है।

सर्व अधिकारी

१. सर्वस्व त्यागी ही सर्व अधिकारी है। २. संगमयुग में बाप दादा द्वारा मिले हुए सर्व खजानों एवं शक्तियों की प्राप्ति के नशे में रहने वाला ही सर्व अधिकारी है। ३.अपनी सूक्ष्म इन्द्रियों तथा कर्मइन्द्रियों पर नियंत्रण रखना, उन्हें श्रीमत प्रमाण चलाना ही सर्व अधिकारी बनना है। ४.कन्ट्रोलिंग वा मोल्डिंग पावर के आधार पर अपने स्वभाव संस्कार पर अधिकार रखना ही सर्व अधिकारी बनना है।

परोपकारी

१. अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर दूसरों का कल्याण करना, तन-मन-धन से दूसरों की सेवा करना ही परोपकार है। २. अपकारियों पर भी उपकार करना तथा अपने शत्रुओं को भी अपना मित्र बनाना, वैर भावना नहीं रखना ही परोपकारी बनना है।

सत्कारी

१. बड़ों को रिगार्ड, छोटों को प्यार देना। २."पहले आप" का पाठ पक्का करना अर्थात सर्व को सत्कार देना है। ३. दूसरे की गलती को अपनी गलती समझ उसे समा लेना, वातावरण में न फैलाना। यह भी सत्कार देना है।

प्रैक्टिकल स्वरूप के लिए

१. अमृतवेले से रात्रि सोने तक ईश्वरीय मर्यादा तथा नियम प्रमाण दिनचर्या को चलाना और अपनी चेकिंग के लिए डेली चार्ट रखना है। २. साकार बाबा के जीवन चरित्र को सामने रखकर अपने चरित्र और चित्र को बेरीफाय करना। ३. एकान्तवासी बन एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाना है। ४. सदा ईश्वरीय सेवा में एवररेडी रहना है। तथा कल का काम आज और आज का काम अब करना है। ५. पूरा ट्रस्टी बनकर रहना है। ६. हर रोज किसी न किसी आत्मा को ईश्वरीय महावाक्य सुनाना तथा गुणों व शक्तियों का दान देना है।

पवित्रता और सत्यता की परिभाषा क्या है? सम्पूर्ण किसको कहा जाता है?

सम्पूर्ण पवित्रता

१. किसी भी व्यक्ति या वैभव में रिंचक मात्र भी आकर्षण न होना ही पवित्रता है। स्वयं के शरीर में आकर्षण, अहंकार, अन्य के शरीर में आकर्षण, वैभवों में आकर्षण, लोभ, उत्पन्न हुए आकर्षण की आपूर्ति क्रोध पैदा करता है, यह विकार ही अपवित्रता है। २. जो शान्ति प्रदान करे वह पवित्रता है। ३. इच्छा मात्रम अविद्या ही पवित्रता है। मन-शान की इच्छा होना भी अपिवत्रता है। ४. ट्रस्टीपन की स्टेज पर कायम रहना ही पवित्रता है। ५. मन-वचन-कर्म वा स्वप्न में खराब विचार न आये-यही सम्पूर्ण पवित्रता है। ६. अपने आदि तथा अनादि स्वरूप में स्थित रहना ही पवित्रता है। ७. वृति और दृष्टि पूर्णतया आत्मिक होना ही पवित्रता है। ८. मन तथा इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण ही पवित्रता है। ९. सबके प्रति सदा शुभ भावना एवं शुभ कामना रखना ही पवित्रता है। १०. योग द्वारा विकर्मों का खाता भस्म करना ही पवित्रता है।

सत्यता क्या है?

१. जो चीज जैसी है, उसे वैसा जानना, मानना और व्यवहार में लाना ही सत्यता है। २. जो सदा अजर, अमर एवं पवित्र है वह सत्य है। ३. सत्य वह है जो सदा शाश्वत है। ४. मन, वचन तथा कर्म में रामानता ही सत्यता है। ५. परमात्मा जो एकमात्र सदा एवं सम्पूर्ण सत्य है, उससे सम्बन्ध जोड़ना ही सत्यता है।

सत्यता को धारण करने वाला- १. सदा खुशी में रहता है, कहा जाता है - "सच तो बिठो नच" । २. सत्यता को धारण करने वाला ही कल्याणकारी बन सकता है। ३. सत्यता पर चलने वाले की नांव

डोल सकती है पर डूब नहीं सकती। ४. सत्यता वह प्रकाश है जो किसी भी वस्तु के वास्तविक स्वरूप को प्रकट कर सकता है।

कर्मातीत अवस्था अर्थात् नष्टामोहा स्मृतिलब्धा की लास्ट स्टेजः-

कर्मातीत अवस्था किसे कहा जाता है?

१. कर्म के बन्धन से मुक्त न्यारा बन कर्म में तत्पर रहना ही कर्मातीत अवस्था है। २. देह, देह के सम्बन्धों के बन्धन से मुक्त होना ही कर्मातीत अवस्था है। ३. कर्म के वश न हो अथार्टी बन कर्मइन्द्रियों के सम्बन्ध में आना ही कर्मातीत अवस्था है। ४. विनाशी कामनाओं, वैभवों आदि की आकर्षण से परे रह कर्म करना ही कर्मातीत अवस्था है। ५. कर्मों के हिसाब-किताब से मुक्त हो सैम्पुल बनना ही कर्मातीत अवस्था है। ६. सेवा करते हल्का रहना, सेवा के बंधन से मुक्त रहना ही कर्मातीत अवस्था है।

कर्मातीत अवस्था की निशानियां

१. मेरे पन की इच्छाओं से परे होगा। २. वह लौकिक, अलौकिक कर्म और सम्बन्ध के स्वार्थ भाव से मुक्त होगा। ३. पिछले जन्मों के कर्मों के हिसाब-किताब व वर्तमान पुरुषार्थ की कमजोरी के कारण किसी भी व्यर्थ स्वभाव, संस्कार वा पिछला संस्कार व स्वभाव के संकल्प मात्र से भी मुक्त होगा। ४. शरीर की व्याधि अपनी स्वस्थिति को हलचल में नहीं लायेगी। ५. वह सदा सिद्दि स्वरूप होगा। ६. सदा शुभचिंतक हो, विश्व कल्याणकारी और वरदानी मूर्त बन सर्व की इच्छा पूर्ण करने वाला स्वयं इच्छा मात्रम् अविद्या होगा। ७. सेवा करते न्यारे और प्यारे पन की स्थिति में रहेगा। ८. बाप समान अचल, अडोल, निर्विघ्न, निर्बन्धन, निर्विकल्प, निराकारी निर्विकारी और निरअंहकारी स्थिति में स्थित हो रुहानियत का एक्जैम्पुल और सैम्पुल होगा। ९. वह स्वयं से, ब्राह्मण परिवार से और बाप से सदा सन्तुष्ट होगा। १० कर्मयोगी बन कर्मभोग को मुस्कराते हुए युक्त करेगा।

कर्मातीत अवस्था को प्राप्ति करने के लिए विशेष किन-किन धारणाओं पर अटेन्शन चाहिए?

१. सभी सम्बन्ध एक बाप से हों, मेरा तो एक शिवबाबा दूसरा न कोई....यह नींव पक्की हो। २. अब वापिस घर जाना है, अन्दर यह दृढ़ संकल्प हो। ३. हर परिस्थिति में वाह बाबा, वाह ड्रामा, वाह रे मैं के गीत गाता रहे। ड्रामा की ढाल पर सदा स्थित रहे। ४. सदा अटेन्शन रहे जो कर्म मैं करूंगा मुझे देख और करेंगे। स्वयं को विश्व का आधारमूर्त, उद्धारमूर्त समझकर हर कार्य करे। ५. व्यक्ति, वैभव, वस्तु की आकर्षण से परे रहे। ६. स्वयं की देह के प्रति सूक्ष्म लगाव, खिंचाव से परे रहने का प्रयास करे।

सिद्धि स्वरूप की स्थिति क्या है?

योग-युक्त, युक्ति-युक्त, राज-युक्त ही सिद्धि स्वरूप है।

१. अचल, अडोल, एकरस व एकटिक अवस्था वाला होगा। २. इच्छा मात्रम् अविद्या की स्थिति ३. उपरामः स्थिति ४. अव्यक्त स्थिति ५. लाइट, माइट, स्वरूप की स्थिति ६ निराकारी, निरअंहकारी एवं निर्विकारी स्थिति ७. विघ्न विनाशक स्थिति ८. न्यारी एवं प्यारी स्थिति ९. आत्मिक एवं स्वमान की स्थिति।

सिद्धि किस प्रकार से प्राप्त हो सकती है?

१. समर्थ संकल्प से २. दृढ़ निश्चय से ३. सच्चाई व सफाई से। ४. मन-वचन-कर्म की पवित्रता से। ५. सर्व सम्बन्ध एक बाप से रखने से। ६. अन्तर्मुखी, एकान्तवासी और एकाग्र होने से। ७. श्रेष्ठ वृति से, ८. अटेन्शन व चैकिंग करने से ९. बीती को बीती करने से।

सिद्धि स्वरूप बनने की निशानियांः-

१. बल एक भरोसा २. शुभचिंतक एवं शुभचिंतन ३. संकल्प, बोल एवं कर्म समान होंगे ४. हर कार्य विधि पूर्वक होगा। ५. जागती ज्योती अथवा निद्राजीत होगा। ६. थ होगा। ७. सर्व अधिकारी होगा। ८. सर्व सत्कारी, पूज्यनीय, माननीय होगा। ९. निमित्त भाव वाला होगा। १०. प्रसन्नचित एवं सन्तुष्ट होगा। ११. सम दृष्टि होगी। १२. चलता फिरता फरिश्ता होगा। १३. चेहरे में चमक, झलक एवं फ्लक होगी। १४. मेहनत कम सफलता अधिक होगी। १५. समय प्रमाण गुण एवं शक्ति का प्रयोग करेगा। १६. वेस्ट को बेस्ट करने वाला होगा। १७. परोपकारी होगा। १८. महादानी, वरदानी होगा। १९. उद्धारमूर्त एवं उदाहरण मूर्त होगा। २०. यज्ञ स्नेही होगा। २१. विशाल बुद्धि दूरादेशी होगा। २२. मन पसन्द, लोक पसन्द, प्रभु पसन्द होगा। २३. सफलता परछाई की तरह होगी। २४. निश्चय, निश्चिंत व निश्चित विजयी होगा। २५. दुआओं वा आशीर्वाद का पात्र होगा। २६. संस्कारों में मिलनसार होगा।

क्रमशः

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र. कु. आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी ९/१९ कृष्णा नगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओम शान्ति प्रैस कृष्णा नगर, देहली-५१ से छपवाया Regd No. 10563/65-D. (E) -70